युगऋषि का अध्यात्म

युगऋषि की वाणी में

लेखक
पं. लीलापत शर्मा
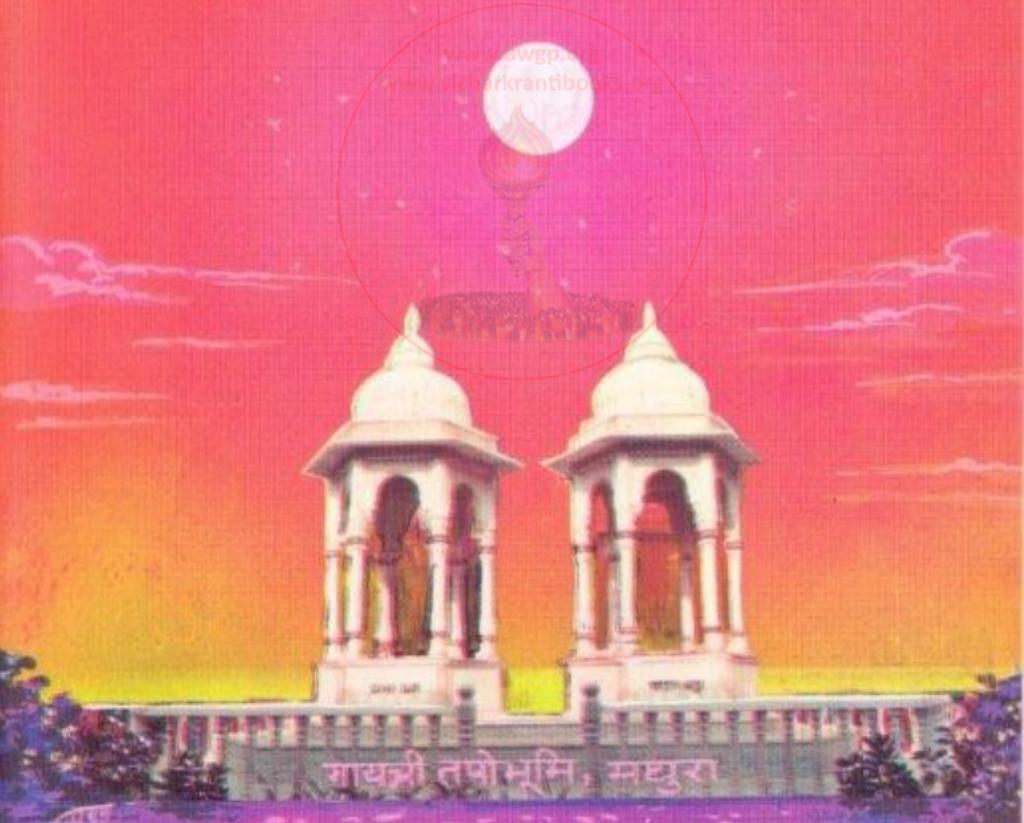
युगऋषि का अध्यात्म युगऋषि की वाणी में

□

लेखक :

पं० लीलापत शर्मा

□
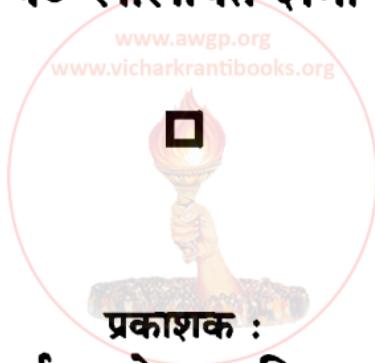
प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा (उ० प्र०)

फोन : (0565) 2530128, 2530399

मो. : 09927086289, 09927086287

पुनरावृत्ति सन् 2010 मूल्य : 15.00 रुपए

आत्म निवेदन

"हे इंद्र, तुम हमारे लिए गौओं को लाओ।"

"दस सिर ताहि बीस भुज दंडा। रावन नाम वीर बरिबंडा॥"

हमारे धार्मिक साहित्य में इस प्रकार के कथन अनेक स्थानों पर पढ़ने में आते हैं। देवताओं के स्वामी को गौएँ लाने के काम से क्या लेना देना? दस सिर वाला रावण किस मुँह से भोजन करता होगा, करवट लेकर कैसे सोता होगा? ऐसे प्रश्न स्वाभाविक हैं, पर मालूम नहीं श्रद्धा की अधिकता रहती है या जिज्ञासा की कमी कि हम पाठकगण ऐसे प्रश्नों से सदा कतराते हैं। शायद हमें यह भय हो कि ऐसी जिज्ञासा करने से ईश्वर नाराज हो जाएँगे या हमारी श्रद्धा स्थिर नहीं रह पाएँगी।

इसके कारण जो भी हों, पर यह सुनिश्चित तथ्य है कि ईश्वर जिज्ञासु से कभी अप्रसन्न नहीं होते। ऐसा होता तो इसी धर्म साहित्य में जिज्ञासुओं के प्रश्न और उनके समाधानों के उल्लेख नहीं मिलते। जिज्ञासा से ही सत्य का बोध होता है। भक्त को जिज्ञासु होना ही चाहिए तभी वह अपने मन की भ्रांतियों के कुहरे को हटाकर ईश्वर के गुणों एवं सामर्थ्यों की झलक पा सकेगा और ईश्वर के प्रति अपनी मान्यताओं को सुदृढ़ कर अपने चिंतन और व्यवहार को सुधार पाएगा। जिज्ञासा हमारी धर्म नौका की पतवार है जो ईश्वर की ओर हमारी यात्रा को मार्ग से विचलित हुए बिना पूरा कराती है।

हमारा संपूर्ण धर्म साहित्य ऐसे ही रूपकों और अलंकारों से युक्त भाषा में लिखा गया है। ऐसी भाषा में कहे गए प्रसंग जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं और कथानक को सरस व रोचक बनाते हैं। ऋषियों का उद्‌देश्य उन कथाओं को लिखने में मात्र मनोरंजन करना नहीं था, अपितु अध्यात्म के, आत्मा-परमात्मा के, विज्ञान के रूखे नियमों व सिद्धांतों को सरस बनाकर समझाना था। **सत्य में नारायण विराजते हैं।** यह नीरस सा वाक्य भागवत नियम होते हुए भी साधकों को सत्य

का वरण करने की प्रेरणा नहीं दे पाता, लेकिन सत्यवादी हरिश्चंद्र की मार्मिक कथा यह बताती है कि सत्य मार्ग से विचलित करने वाली अनेक कठिन परिस्थितियाँ हरिश्चंद्र के जीवन में आयीं, पर सत्य के प्रति उनकी आस्था में कोई कमी नहीं आई। ऐसी कथा सुनकर, पढ़कर शिक्षित-अशिक्षित सभी की समझ में सत्य का महत्त्व आ जाता है और अपने स्वयं के जीवन को सत्य मार्ग पर चलाने की प्रेरणा होती है। कथा का महत्त्व बस इतना ही है। हरिश्चंद्र नाम के कोई राजा सचमुच हुए हों, चाहे न हुए हों, इस बात से सत्य साधक का भला क्या हित होने वाला है? हित तो इस बात में है कि उसके अंत:करण में यह नियम समा जाए कि सत्य में नारायण का वास सदा सर्वदा रहता है। हरिश्चंद्र की इस कथा को बार-बार पढ़ने से, हरिश्चंद्र के चित्र का नमन पूजन करने से हमें भी ईश्वर के दर्शन हो जाएँगे अथवा सत्य का पालन करने से होंगे, यह बात हमें विचारना चाहिए। कथा का श्रवण-वाचन या चित्र का नमन-पूजन प्रेरणा भर दे सकता है, ईश्वर दर्शन जैसा परिणाम नहीं दे सकता। यह **प्रतीक अध्यात्म** है। ईश्वर दर्शन जैसा कल्याणकारी परिणाम तो प्रेरणा को कार्यरूप में बदल देने से ही प्राप्त हो सकता है। यह **सार्थक अध्यात्म** है। गंगा स्नान पवित्रता की प्रेरणा देने वाला प्रतीक अध्यात्म है, चिंतन और व्यवहार में पवित्रता को साधे रखना सार्थक अध्यात्म है।

इसी प्रकार ईश्वर के विचित्र से लगने वाले रूपों के वर्णन हमारे धर्म साहित्य में हैं। सिर से निकलती गंगा, मस्तक पर चंद्रमा, तीन नेत्र वाले शंकर, चार हाथ वाले विष्णु, चार सिर वाले ब्रह्मा जी, आठ भुजा वाली माता दुर्गा आदि अनेक भगवत स्वरूप पुराणों की कथा में दर्शाए गए हैं। ईश्वर को इन विचित्र स्वरूपों में प्रस्तुत करने का कारण भी वही है। ईश्वर के अनंत गुण व सामर्थ्य हैं। इन गुणों, सामर्थ्यों को रोचक ढंग से दर्शाने के लिए ही ऋषियों ने इन विचित्र स्वरूपों का निर्माण किया है। **एको ब्रह्म बहुधा वदन्ति** उक्ति के अनुसार एक ईश्वर की असंख्य विभूतियों को दर्शाने के लिए ही देवी-देवताओं के असंख्य स्वरूपों का

निर्माण ऋषियों ने किया है। गंगा पवित्रता की, चंद्रमा शीतलता का, तीसरा नेत्र जाग्रत विवेक बुद्धि का प्रतीक है। इन लक्ष्यों को जो सदा याद रखे और व्यवहार में लाए, वही सच्चा अध्यात्मवादी है। सच्चा अध्यात्मवादी बन पाने के लिए पवित्र व शीतल मन और जाग्रत विवेक बुद्धि का लक्ष्य याद रखना और व्यवहार में लाना आवश्यक है, पर साधक इन नियमों को चलते-फिरते, काम करते किस प्रकार सदा याद रख पाएगा ? इस समस्या का ऋषियों ने सार्थक व प्रभावी हल खोज निकाला। उन्होंने शक्ति सामर्थ्यों का, गुणों व भावों का व्यक्तिकरण कर दिया अर्थात उन भावों को तेजस्वी व्यक्तित्व के तेजोवलय के रूप में तथा विभिन्न आयुधों, वाहनों व अन्य वस्तुओं के रूप में दर्शाया। जैसे शंकर की अखंड पवित्रता को अनवरत प्रवाहित होने वाली गंगधारा के रूप में, रावण की विद्वता को नौ सामान्य सिरों के रूप में, उसकी भ्रष्ट बुद्धि को गधे के एक सिर के रूप में चित्रित किया। पवित्रता, श्रद्धा, करुणा, विद्वता आदि सद्गुण नदी या चंद्रमा जैसे आकार वाले पदार्थ तो होते नहीं इसलिए उनको व उनके प्रभावों को समझना व स्मरण रखना बहुत कठिन होता है। इन निराकार गुणों के साकार और उपयुक्त प्रतिनिधियों को चुनकर उन्हें एक तेजस्वी देह में चित्रित कर दिया जाए या गढ़ दिया जाए तो यह कठिन कार्य सरल व सुबोध बन जाता है। निराकार गुणों को साकार देह के रूप में प्रगट करने की यह "व्यक्तिकरण" (Personification) पद्धति ऋषियों ने ईजाद की थी।

इस विवेचना से यह नहीं समझा जाना चाहिए कि प्रतीकों का कोई महत्त्व नहीं होता। स्वतंत्रता से पूर्व तिरंगे ध्वज की रक्षा करने के लिए लाखों भारतीयों ने अपने प्राणों की आहुति दे दी थी, क्योंकि वह तिरंगा कपड़ा हमारी राष्ट्र भक्ति का प्रतीक प्रतिनिधि था। कच्चे सूत का मूल्यहीन धागा कितना महत्त्वपूर्ण बन जाता है जब बहिन उसे अपने पवित्र स्नेह के रूप में भाई की कलाई पर बाँधती है। श्रेष्ठ प्रतीक का, ईश्वर की छवि का महत्त्व और मूल्य है, पर तभी जब उसमें गुंथे हुए गुणों को, भावों और सामर्थ्यों को उतना ही महत्त्वपूर्ण

और मूल्यवान समझा जाए, याद रखा जाए और व्यवहार में लाकर उनका सम्मान किया जाए।

सद्गुणों का व्यक्तिकरण लेखन की चमत्कारी कला है जो रूप रहित, आकार रहित गुणों, भावों एवं सामर्थ्यों पर ध्यान केंद्रित करने के लिए और उन पर सार्थक चिंतन करने के लिए रूप और आकार वाले तेजस्वी देहों का निर्माण करती है। अच्छा हो कि हम अपनी आस्था भगवान के उन विभिन्न स्वरूपों पर समर्पित करने के स्थान पर उनके गुणों, भावों और सामर्थ्यों पर समर्पित करें। तभी हमारी आस्तिकता सार्थक हो पाएगी।

चिंतन की इस चिन्मय धारा का अनुसरण एवं प्रतिपादन **युगऋषि परम पूज्य गुरुदेव पं० श्रीराम शर्मा आचार्य** ने जीवन भर किया। उनके लाखों लाख शिष्यों एवं पाठकों को इस प्रभावी चिंतन का स्मरण कराने के लिए आध्यात्मिक वास्तविकताओं से अवगत कराने के लिए आ० पं० लीलापत शर्मा ने अपने संस्मरणों का उल्लेख इस पुस्तक में किया है। पूज्य गुरुदेव से घनिष्ट संपर्क की अवधि में प्राप्त हुए मार्गदर्शन को गुरु शिष्य संवाद के रूप में लिपिबद्ध करने वाली यह पुस्तक युग पुरुष के आध्यात्मिक चिंतन को उनकी ही वाणी में प्रस्तुत करने का प्रयास है।

युवा वर्ग में ईश्वर के प्रति अनास्था की प्रवृत्ति को विराम देने में यह प्रयास सार्थक होगा। ईश्वर की उपासना-साधना के द्वारा अपने चरित्र और चिंतन का सुधार करने और अपने गुण, कर्म, स्वभाव को श्रेष्ठ दिशा की ओर मोड़ने में यह पुस्तक सभी के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। इस सद्भावना एवं मंगल कामना के साथ यह पुस्तक उन्हीं के श्री चरणों में समर्पित है जहाँ से सार्थक अध्यात्म की यह चिंतन धारा उद्भूत हुई है।

व्यवस्थापक

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

त्रिपदा गायत्री की सूक्ष्म साधना

परमपूज्य गुरुदेव के सानिध्य में चार वर्ष अति निकटता के साथ व्यतीत हुए। गुरुदेव जब कहीं बाहर जाते तो हमें अपने साथ ही ले जाते। गायत्री तपोभूमि में रहते हुए भी हमने उन्हें बहुत नजदीक से देखा और बारीकी से समझने का प्रयास किया। जितना भी प्रयास किया हर बार इसी निष्कर्ष पर पहुँचे कि उनके रूप में परमात्म सत्ता ही प्रकट हुई है। जब कभी उनसे इस निष्कर्ष की पुष्टि करानी चाही तो वे यही कहते कि हमारे जीवन में जो भी अद्भुत और असाधारण दिखाई देता है वह उपासना का ही परिणाम है। एक बार हमने उनके सम्मुख जिज्ञासा रखी कि गुरुदेव! भारत में ८० लाख बाबा हैं और घर-घर में गायत्री का जप हो रहा है, अन्य लोग भी दूसरे देवी-देवताओं की उपासना करने में लगे हैं, लेकिन उपासना से जैसी उपलब्धि आपको मिली वैसी अन्य लोगों को क्यों नहीं मिली? आप कौन सी गायत्री की उपासना करते हैं, वह हमें भी बताइए। यदि हमें आप इसके लिए उपयुक्त पात्र समझते हों तो हम भी उसी गायत्री की उपासना प्रारंभ कर दें।

गुरुदेव बोले—बेटा! गायत्री के दो रूप हैं एक बहिरंग और दूसरा अंतरंग। अधिकांश लोग बहिरंग स्वरूप तक ही सीमित रह जाते हैं। वे गायत्री के अंतरंग स्वरूप की उपासना साधना नहीं करते, अतः उपासना की पूरी फलश्रुतियों से वंचित रह जाते हैं।

हमने कहा—गुरुदेव! हम तो गायत्री का एक ही स्वरूप समझते हैं। यह गायत्री माता जो मंदिर में हैं, हम तो उसी को समझते हैं। ये दो स्वरूप गायत्री के हमने पहले कभी नहीं सुने। हमें

पहले आप बहिरंग स्वरूप के बारे में विस्तार से बताइए। आपने तो दो रूप बताकर हमारी जिज्ञासा को बढ़ा दिया है। इसका समाधान कीजिए।

पूज्य गुरुदेव बोले—बेटा! बहिरंग पक्ष वह है जिसका जप लोग प्रायः करते हैं। उनका विचार है कि गायत्री माता वही है जो मंदिर में बैठी है। वह एक देवी है, जो हंस पर सवारी करती है, हाथ में कमंडलु और पुस्तक लिए रहती है। उसको कोई एक चम्मच जल, फूल, चंदन और प्रसाद चढ़ा दे, दीपक अगरबत्ती जलाकर आरती उतार ले और दो-चार माला सटका ले, तो गायत्री माता प्रसन्न हो जाती है और वह जो कुछ उससे माँगता है वह मनोकामना पूर्ण कर देती है। धन-दौलत दिला देती है, नौकरी में तरक्की करा देती है, मुकदमा जिता देती है, जिसके बच्चे न हों उसको बच्चा दे देती है। सारे धर्माचार्य और गृहस्थ भगवान की इसी उपासना में लगे हैं। मनोकामनाएँ पूरी कराने के लिए भजन करते हैं। भजन करके भगवान को हुक्म देते हैं कि हमने आपका भजन किया, प्रसाद चढ़ाया, परिक्रमा की, अब हमारी मनोकामना पूरी करो।

भक्तों ने भगवान को अपना नौकर समझ रखा है अथवा किसी ऑफिस का भ्रष्टाचारी अफसर या क्लर्क समझ रखा है, जो कुछ रुपये-पैसे लेकर सब काम कर देता है। जैसे किसी आदमी की खुशामद करें और उसकी सेवा करें, पैर दबाएँ तो वह प्रसन्न हो जाता है, उसी प्रकार भगवान भी प्रसन्न हो जाता है। प्रशंसा के गीत सुनकर जैसे राजा लोग प्रसन्न होकर उपहार दे देते थे, उसी प्रकार स्तुति, स्तवन, मंत्र और प्रार्थना सुनकर वह भी प्रसन्न होकर सबकी मनोकामनाओं को पूर्ण कर देता है। बेटा! बहिरंग स्वरूप की उपासना ऋषियों ने प्राथमिक जानकारी के लिए अनगढ़ लोगों के लिए बनाई थी। यह उपासना का 'क' से कबूतर, 'ख' से खरगोश तो है, लेकिन हमारा दुर्भाग्य यह है कि हम इसी को सब कुछ समझ लेते हैं। इससे आगे कदम बढ़ाना ही नहीं चाहते। अगली कक्षा में

प्रवेश करना ही नहीं चाहते। जब हम कहते हैं कि अब फिजिक्स, कैमिस्ट्री, गणित भी पढ़ना है तो मना कर देते हैं। बस एक सरल सा काम पकड़ लिया है—माला सटका लो, आरती उतार लो, खुशामद कर लो और मनचाही मुराद पूरी करा लो।

हमने कहा—गुरुदेव! यह बहिरंग पक्ष तो हमारी समझ में आ गया। अब आप गायत्री के अंतरंग पक्ष को भी समझा दीजिए और हमें यह भी बता दीजिए कि आपने कौन सी गायत्री का जप किया है, जो आपको फूलती-फलती चली गई।

गुरुदेव बोले—बेटा! हमारे दीक्षा गुरु पूज्य पंडित मदन मोहन मालवीय जी ने हमें ब्राह्मण का जीवन जीते हुए गायत्री साधना करने का आदेश दिया था। हमने उसका पालन पंद्रह वर्ष की आयु तक पूरी निष्ठा और श्रद्धा से परमार्थ परायण ब्राह्मण का जीवन जीते हुए किया। जब हमारे सद्गुरुदेव स्वामी सर्वेश्वरानंद जी ने हमारी पात्रता देखी, हमारा साहस देखा, तो पंद्रह वर्ष की आयु में प्रातःकाल उपासना में आए और चौबीस-चौबीस लाख के चौबीस महापुरश्चरण करने का निर्देश दिया। बेटा! ब्राह्मण का जीवन जीते हुए जो गायत्री साधना करता है—उसे साहस मिलता है। गायत्री साहस वालों की ही है, कमजोर, कामचोर और बुजदिलों की गायत्री नहीं है। गायत्री का अर्थ है साहस, ऐसा साहस जो श्रेष्ठ कर्म, श्रेष्ठ विचार और श्रेष्ठ भावनाओं के साथ आदर्शों और सिद्धांतों पर चला सके। हमारे गुरुदेव ने पहले हमारी हिम्मत को देखा और परखा। हमें आदेश दिया कि जिस जीभ से जप करना है पहले उसे ठीक करने के लिए संयम और तप करना है। हविष्यान्न ही ग्रहण करना है। हविष्यान्न तैयार करने की विशिष्ट विधि भी बताई। उन्होंने कहा कि रात को गाय को जौ खिलाकर, सुबह गोबर में से बचे हुए जौ निकालकर, धो-सुखाकर आटा पीसकर, गाय की छाछ के साथ पीकर तप करना है। पहले अपनी बंदूक ठीक रख, तभी कारतूस काम करेगा। आदेशानुसार हम जौ का आटा छाछ के साथ पीकर जप-तप करते रहे। इस प्रकार हमारे गुरु ने पहले हमारी हिम्मत को देखा।

हमने कहा—गुरुदेव! गायत्री साधना की पहली पात्रता साहस है। जिसमें साहस नहीं, वह गायत्री साधना का पूरा लाभ नहीं उठा सकता। अब आप हमें त्रिपदा गायत्री के विषय में बताइए। क्या आपने त्रिपदा गायत्री की साधना की है?

पूज्य गुरुदेव बोले—बेटा! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न पूछा है। हमने त्रिपदा गायत्री की ही साधना की है। उपासना, साधना और आराधना का अवलंबन लेना ही त्रिपदा गायत्री है। उपासना याने भगवान के पास बैठना और भगवान या गायत्री के गुणों को ग्रहण करना। भगवान पर विश्वास रखना। लकड़ी जब अग्नि के गुणों को धारण कर लेती है तो स्वयं भी अग्नि बन जाती है। इसी प्रकार जब साधक भगवान के गुणों को धारण कर लेता है तो भगवान बन जाता है। हमें विश्वास करना चाहिए कि भगवान सदा हमारे साथ हैं और हमारे प्रत्येक क्रियाकलाप को देखता है। हम बुरे कर्म करेंगे तो दंड मिलेगा और अच्छे कर्म करेंगे तो पुरस्कार मिलेगा। बेटा! उपासना की सफलता के लिए कुछ और भी पात्रताएँ आवश्यक हैं, तभी उपासना फलीभूत होती है।

दूसरी पात्रता है—श्रद्धा, बिना श्रद्धा के कोई उपासना, भजन, पूजा, यज्ञ सफल नहीं होता है। श्रद्धा का ही चमत्कार था कि स्वामी रामकृष्ण परमहंस के हाथ से काली भोजन करती थी। स्वामीजी की श्रद्धा ने काली माँ को भोजन करने के लिए विवश कर दिया था। मीरा को एक साधु ने पत्थर का टुकड़ा दिया और कहा कि ये भगवान कृष्ण हैं। मीरा ने उसी पत्थर में भगवान कृष्ण के दर्शन किए और वह श्रद्धा का ही चमत्कार था कि वे कृष्ण मीरा के साथ छाया पुरुष के रूप में रहने लगे, साथ-साथ नाचने-गाने लगे। राणा ने जब साँपों का पिटारा भेजा तो कृष्ण ने अपनी अँगुली आगे कर दी थी और जब जहर का प्याला भेजा तो स्वयं भगवान कृष्ण ने उसे पी लिया था। यह सारा चमत्कार मीरा की श्रद्धा का था। मीरा की श्रद्धा ने पत्थर के टुकड़े को चैतन्य कर दिया था। एकलव्य ने

मिट्टी के गुरु से जैसा तीर चलाना सीखा वैसा असली गुरु द्रोणाचार्य भी पांडवों को नहीं सिखा सके। एकलव्य की श्रद्धा ने मिट्टी के द्रोणाचार्य में वह शक्ति पैदा कर दी थी जो वास्तविक द्रोणाचार्य में भी नहीं थी। यह सब चमत्कार एकलव्य की श्रद्धा से हुआ था। जब श्रद्धा होती है तभी उपासना सफल होती है।

एक गुरु के कई शिष्य थे। एक शिष्य अपने गुरु पर पूरी श्रद्धा और विश्वास रखता था। वह शिष्य रोगियों का इलाज करता था। जो भी रोगी आता उसे एक चम्मच जल देता और रोगी ठीक हो जाता था। उसकी ख्याति फैलने लगी। गुरुजी को भी मालूम हुआ तो गुरुजी ने शिष्य को एकांत में बुलाकर कहा कि बेटा! तूने जो जादू सीख रखा है, उसे मुझे भी बता दे। देख मैं तेरा गुरु हूँ, मुझसे सच-सच बताना। शिष्य बोला—गुरुजी! मेरे पास कोई जादू, जंतर-मंतर नहीं है। मैं तो गुरुपूर्णिमा पर आपके चरणों को धोकर जल को घड़े में रख लेता हूँ। जो भी आता है, उसे उसी में से एक चम्मच जल दे देता हूँ और वह ठीक हो जाता है। गुरु की आँखों में चमक आ गई। सोचा, मुझे क्या पता था कि मेरे चरणों में ऐसी शक्ति है। अगले दिन गुरुजी ने घोषणा करा दी कि जिसे भी बीमारी हो इलाज कराएँ। उन्होंने अपने पैर धोए और पानी रख लिया। बीमार आए, उनको एक-एक गिलास पानी भर कर पिला दिया लेकिन कोई ठीक नहीं हुआ। दूसरे दिन गुरु ने पैर घुटनों तक धोए और एक-एक लोटा पानी मरीजों को पिलाया,लेकिन तब भी कोई ठीक नहीं हुआ तो गुरुजी ने सोचा कि शिष्य ने मुझसे झूठ बोला है। उन्होंने पुनः शिष्य को बुलाकर पूछा—बेटा! देख मैं तेरा गुरु हूँ, तू मुझे सच-सच बता कि तेरे पास क्या जादू है? शिष्य बोला—गुरुदेव! आपने केवल कर्मकांड किया। आपके जल में श्रद्धा का समावेश नहीं हुआ। मेरे जल में अटूट श्रद्धा और विश्वास घुला है। इस कारण मेरा जल चमत्कार दिखाता है। तब गुरुजी की समझ में आया कि श्रद्धा और विश्वास में कितनी शक्ति है।

तीसरी पात्रता है—समर्पण। कोई व्यक्ति भजन पूजन तो करता है, लेकिन समर्पण नहीं करता तो उसका भजन सफल नहीं होता है। जीभ की नोंक से कहता रहता है—"सब सौंप दिया है भार तुम्हारे चरणों में, भगवान तुम्हारे चरणों में।" पैसा अपने कब्जे में रखा, समय अपने कब्जे में तब क्या सौंप दिया है भगवान को? बेकार बकवास करता रहता है। जबान की नोंक से बकवास करना बंद कर। हमने भगवान को अपना समय, धन, श्रम और शरीर सब कुछ सौंप दिया तब भगवान के पास, हमारे गुरुदेव के पास जो कुछ था, सबके हम मालिक बन गए। बेटा! समर्पण से ही मालिक बनते हैं। लड़की की जब शादी हो जाती है तो वह अपने पति को तन, मन, गोत्र सब कुछ सौंप देती है और पति की आज्ञा के अनुसार ही कार्य करती है, तो वह घर की मालकिन बन जाती है और पति पर भी हुकुम चलाती है। अगर दुर्भाग्यवश शादी के तुरंत बाद वह विधवा हो जाए तो भी वह मकान-जायदाद की मालकिन बन जाती है। ऐसा समर्पण के कारण ही होता है। जो भगवान को अपना सब कुछ समर्पण कर देता है, वह समस्त ईश्वरीय संपदाओं का मालिक बन जाता है। दूसरी ओर एक वेश्या होती है, जो धन के लालच में अपने ग्राहक को समर्पण करती है। ग्राहक को अधिक से अधिक लूटने खसोटने में लगी रहती है, इसलिए वह जायदाद में कोई हिस्सा नहीं ले पाती। वह हमेशा साड़ी, बुंदे, हार जैसी कई वस्तुओं की मांग करती रहती है, इसलिए वह मालकिन नहीं बन सकती। आज अधिकांश लोगों की उपासना वेश्यावृत्ति जैसी ही है। हम भगवान से हमेशा फरमाइश ही करते रहते हैं। बेटा! उपासना में समर्पण करना पड़ता है तभी ऋद्धि-सिद्धि मिलती है और इसके लिए साहस की आवश्यकता पड़ती है। जो श्रद्धा समर्पण के साथ गायत्री उपासना करेगा उसका भजन सफल होगा। यह राज मार्ग सबके लिए खुला हुआ है।

हमने कहा—गुरुदेव! उपासना तो हमारी समझ में आ गई। अब साधना के विषय में बताइए। आपके अमृत वचनों से हमारे मन की सब गुत्थियाँ सुलझती जा रही हैं। ऐसा जी चाहता है कि आप बोलते रहें और हम सुनते रहें।

गुरुदेव बोले—बेटा! उपासना तो ईश्वर की करनी होती है लेकिन साधना अपनी की जाती है। साधना में अपने आपको ठीक करना पड़ता है, अपने दोष दुर्गुणों को छोड़ना पड़ता है। आलस्य, असंयम, बीड़ी, सिगरेट, तंबाकू, गुटखा सब छोड़ना पड़ता है। कोई व्यक्ति दिन-रात भजन करता है, माला घुमाता है, कथा भागवत सुनता है, तीर्थयात्रा करता है, उपवास करता है लेकिन अपने दोष, दुर्गुणों को छोड़ने को तैयार नहीं होता, तो उसको इन सबसे कोई लाभ नहीं मिलने वाला है। रावण, कुंभकरण, मारीच, भस्मासुर आदि असुरों ने भगीरथ जितनी ही तपस्या की होगी, लेकिन इस तपस्या से किसी को कोई लाभ नहीं मिला। मारीच ने अपना ही सत्यानाश कराया, भगवान राम और सीता माता को परेशान किया। रावण ने तपस्या की तो, पर साधना के अभाव में सारे वंश का सत्यानाश करा दिया। भस्मासुर ने तपस्या की तो, पर साधना के अभाव में स्वयं जलकर भस्म हो गया। जिन भगवान शंकर ने वरदान दिया, उनको भी परेशान किया। सारे राक्षसों ने तपस्या करके शक्ति तो अर्जित की, लेकिन साधना के रूप में अपने दोष दुर्गुणों को नहीं छोड़ा, अपने आपको ठीक नहीं किया, तो उसके अच्छे परिणाम नहीं निकल सके। जो भी व्यक्ति उपासना, भजन, पूजन, कथा, भागवत, तीर्थयात्रा, उपवास तो करता है, लेकिन अपने दोष दुर्गुणों को नहीं छोड़ता, उसे उसकी उपासना का लाभ प्राप्त नहीं हो सकता।

उपासना का लाभ प्राप्त करने के लिए पहले हमें अपने आपको ठीक करना होता है। रत्नाकर डाकू का जीवन दोष दुर्गुणों से भरा था, लेकिन जैसे ही उसने अपने आपको ठीक किया,

अपनी साधना की, बुराइयाँ छोड़ीं तो राम भक्त हो गया। उल्टा-सीधा कोई भी नाम, कोई भी मंत्र, निर्मल मन और पवित्र अंतःकरण वाले व्यक्ति को मंजिल तक पहुँचा ही देता है। उसे डाकू रत्नाकर से महर्षि वाल्मीकि बना ही देता है। भगवान राम को जब गर्भवती सीता माता को वन में भेजना था तो उन्होंने ऐसे ऋषि आश्रम की खोज में नजर घुमायी जहाँ सीता को पुत्री के समान प्यार और सम्मान मिले, तो उनकी नजर वाल्मीकि आश्रम पर ही टिकी। ऐसे विश्वसनीय ऋषि का निर्माण मात्र साधना से ही संभव हो सकता है। कोई व्यक्ति चाहे कितना ही निकृष्ट क्यों न हो, जब वह अपने दोष दुर्गुणों को छोड़ने का तप करता है तो महर्षि वाल्मीकि बन सकता है। इसके लिए साहस चाहिए और साहस गायत्री माता ही दे सकती हैं।

गुरुदेव थोड़ा विश्राम के बाद पुनः बोले—बेटा! साधना का चमत्कार पशुओं और निर्जीव वस्तुओं पर भी देखा जा सकता है। जब मदारी बंदर और रीछ को साध लेता है, तो वह तमाशा दिखाकर लोगों का मनोरंजन करता है और मदारी के परिवार का पेट पालता है, उसका मकान बनवा देता है और लड़की की शादी करा देता है। मिट्टी में मिला लोहा बेकार पड़ा रहता है लेकिन जब साध लिया जाता है तो उससे हवाई जहाज, ट्रेन, मोटर का इंजिन और न जाने क्या-क्या बन जाता है और थोड़ी देर में हमें कहीं से कहीं पहुँचा देता है। इसी प्रकार जब मनुष्य अपने आपको साध लेता है, ठीक कर लेता है, तो वह देवता और फिर भगवान बन जाता है।

बेटा! सिखों के गुरु रामदास के यहाँ हजारों शिष्य थे लेकिन उन्होंने अपना उत्तराधिकारी अर्जुनदास को ही चुना, क्योंकि उसने अपने आपको ठीक कर लिया था। वह दिन भर बर्तन साफ करता रहता था। दूसरे शिष्यों ने कहा कि हम भजन करते हैं, पाठ करते हैं, प्रवचन अच्छा देते हैं, श्लोक शुद्ध बोलते हैं, इसलिए हमें उत्तराधिकारी बनाना चाहिए लेकिन अर्जुनदास के

निर्मल मन और पवित्र अंतःकरण के कारण गुरु रामदास ने उन्हीं को अपना उत्तराधिकारी बनाया। बेटा! उपलब्धियाँ निष्ठा और लगन से मिलती हैं।

एक श्रृंगी ऋषि थे, उन्होंने अपनी इंद्रियों को साध लिया था। आँख से किसी की बहिन-बेटी को बुरी नजर से नहीं देखा था, हर लड़की में गायत्री माता का दर्शन करते थे। मुख से भी बीड़ी, सिगरेट, शराब, तंबाकू, मांस, अंडा और हराम की कमाई नहीं लगाई, तो उनके मुख से निकले मंत्रों की शक्ति से राजा दशरथ के यहाँ पुत्रेष्टि यज्ञ से चार भगवान पैदा हुए। बेटा! अपनी इंद्रियों पर संयम रखना पड़ता है, शुद्ध पवित्र जीवन जीना पड़ता है, तब मंत्र की सिद्धि होती है। कोई अत्याचारी, अनाचारी, दुराचारी और दोष दुर्गुणों से भरा आदमी कभी भी भगवान का, गायत्री माता का या गुरु का प्यार नहीं पा सकता है। इसके लिए साहस चाहिए। बिना साहस के कोई आध्यात्मवादी बन ही नहीं सकता।

आज तमाम धर्माचार्यों ने लोगों को इसी भ्रम में डाल रखा है कि भजन करो, पूजन करो, तीर्थयात्रा करो, दान करो, माला घुमाओ और भगवान से अपनी मनोकामना पूरी कराओ। धर्म में यह जो विकृति आ गई है, उसको ठीक करना ही हमारा उद्देश्य है। हम धर्म का वास्तविक स्वरूप लोगों को समझाना चाहते हैं, और सारे धर्मों को एकता के सूत्र में बाँधकर धर्मों का अंतर्राष्ट्रीयकरण करना चाहते हैं। हमारे जीवन का अब यह मुख्य उद्देश्य रह गया है। अब हमें अपनी समस्त शक्तियाँ इसी कार्य में लगानी हैं। देखते हैं, हमारे साथ हमारे अंतरंग बनकर, हमारे कंधे से कंधा भिड़ाकर कौन-कौन सहयोग करने को आगे आते हैं। बेटा! हमारे पास लाखों लोग आए लेकिन कोई बेटा लेने आया, कोई मंत्र सीखने आया और कोई आशीर्वाद लेने आया लेकिन हमारी नजर इस भीड़ में अपने काम के लिए उपयुक्त व्यक्तियों को ही तलाशती रही। जब हमारा स्थूल शरीर

नहीं रहेगा, तब भी हम सूक्ष्म शरीर से ऐसी आत्माओं को तलाशने, तराशने और बढ़ाने का काम करते रहेंगे। महाकाल का संकल्प है, अतः युग परिवर्तन तो होकर ही रहेगा। ऐसे व्यक्ति चाहे युग निर्माण मिशन में हों या अन्य कहीं और।

इतना कह कर पूज्यवर शांत और गंभीर हो गए। हमने ही फिर वातावरण को हल्का-फुल्का बनाते हुए विषय को बदला और बोले—गुरुदेव! आज तो ऐसा लग रहा है कि आपके मुख से स्वयं महाकाल बोल रहे हैं। सुनकर गुरुदेव थोड़े मुस्कराए जैसे पिता अपने बेटे की बात सुनकर मुस्कराते हैं। हमने कहा—गुरुदेव! अब आराधना के विषय में भी बताइए।

पूज्य गुरुदेव पुनः कहने लगे—बेटा! उपासना और साधना से ही पूरा काम नहीं बनता। इसके साथ-साथ आराधना भी करनी पड़ती है। आराधना का अर्थ है, समाज की सेवा। सच पूछो तो उपासना और साधना का उद्देश्य यही हे कि हम अपने को आराधना का पात्र बना सकें, क्योंकि जीवन का मूल उद्देश्य तो आराधना ही है। उपासना द्वारा अंतःकरण को पवित्र और साधना द्वारा मन को निर्मल बनाकर ही हम आराधना की योग्यता अर्जित करते हैं। उपासना साधना के अभाव में की गई आराधना दुष्परिणाम ही लाती है। आज समाज सेवा एक शौक हो गया है। उपासना व साधना के अभाव में समाज सेवा अभिशाप बनती जा रही है। बेटा! समाज ही विराट भगवान का वास्तविक स्वरूप है। अर्जुन ने जब कृष्ण भगवान से कहा कि मुझे अपने वास्तविक स्वरूप के दर्शन कराइए, तो भगवान कृष्ण ने अर्जुन को विश्व ब्रह्मांड का दर्शन कराया। बताया सारा विश्व ही हमारा असली स्वरूप है और इसकी सेवा करना ही हमारी सेवा है। यशोदा माता, कौशल्या माता और काकभुशुंडि को भगवान ने विश्वब्रह्मांड में अपना स्वरूप दिखाया। जितने महापुरुष हुए हैं, उन्होंने सूर्योदय से पहले भजन किया और सारे दिन समाज की सेवा की

है। हमने भी सूर्योदय के पहले गायत्री का जप किया और सारे दिन समाज की सेवा की।

समाज की सेवा सभी को करनी चाहिए। समाज की सेवा ही भगवान की सेवा है। आज जहाँ समाज में कितनी ही बुराइयाँ फैली हैं, प्रत्येक व्यक्ति नास्तिक हो रहा है, नशेबाजी, दुष्प्रवृत्तियाँ, कुरीतियों से समाज कराह रहा है, वहाँ लोग माला घुमाकर और यज्ञ करके ही यह समझ लेते हैं कि हमने बहुत बड़ा काम कर लिया। यह अध्यात्म की विकृति है, हमें उसे ठीक करना है। अध्यात्म की इस भूल को सुधारना होगा। उपासना, साधना, आराधना, त्रिपदा गायत्री का जप ही गायत्री का अंतरंग पक्ष है। बेटा! हमने इसी गायत्री का जप किया है। गायत्री के इसी तत्त्व दर्शन को अपने जीवन में उतारा है। **गायत्री एक दर्शन है, एक सिद्धांत है, जीवन जीने की कला है**। गायत्री के इस तत्त्वदर्शन को जीवन में उतार कर जो भी त्रिपदा गायत्री का जप करता है, उसे ॠद्धि-सिद्धि मिलती है। सूर्य की धूप से कोई भी गरमी प्राप्त कर सकता है। इसी प्रकार गायत्री के तत्त्व दर्शन को समझकर जप करके कोई भी व्यक्ति लाभ उठा सकता है।

मनुष्य को जीवन के लिए तीन चीजों की आवश्यकता होती है—अन्न, जल और वायु। इनके बगैर आदमी जिंदा नहीं रह सकता। लिखने के लिए कलम, स्याही और कागज चाहिए, तभी कोई लिख सकता है। खाद, पानी और बीज तीनों चीजें होंगी, तभी फसल पैदा होगी। इनके बिना फसल तैयार नहीं हो सकती।

गुरुदेव बोले—बेटा! राजस्थान में एक मेला लगा था। उसमें एक व्यक्ति आवाज लगा रहा था। खाटला (खाट) ले लो मेरे भाई, एक रुपये में खाटला ले लो। सबने सोचा एक रुपये में चारपाई बहुत सस्ती है, खरीद लेनी चाहिए। कई लोगों ने उसे पुकारा, एक खाट मुझे दे दो, एक मुझे दे दो, तो खाट बेचने वाले ने कहा—भाई इस खाटला में थोड़ी सी कमी है, उसे सुन लो,

फिर खाटला लेना। एक तो खाट में दो बाँया नहीं, दो दायाँ नहीं, यानि शेरे पाटी नहीं हैं। बीच का झाबड़झल्ला यानि बुनी हुई नहीं है और तीन नहीं हैं पाया अर्थात एक पाए की खाट। इस एक पाये की खाट से कोई भी लाभ नहीं उठा सकता।

गुरुदेव ने समझाया—बेटा! आज यही हालत हमारी है। हमने एक भजन को पकड़ रखा है। सीधी, सरल तरकीब पकड़ रखी है। इसमें कोई झंझट नहीं है। कोई भी माला घुमा सकता है। जीवन का शोधन, जीवन की सफाई, दोष दुर्गुणों को छोड़कर समाज की सेवा करना यह भी बहुत आवश्यक है। जिस भजन में ये सब शामिल नहीं है, उसमें समय की बेकारी है। इसमें किसी का कोई भला नहीं हो सकता। हमारे बच्चे इसी ज्ञान के अभाव में नास्तिक होते चले जा रहे हैं। हमें उनको सच्चा अध्यात्मवादी बनाना है, तभी सबको लाभ होगा। गोस्वामी तुलसीदास ने भी लिखा है—

मज्जन फल देखिय तत्काला, काक होहिं पिक बकऊ मराला।

गंगा, जमुना, सरस्वती तीनों के मिलन से त्रिवेणी बनती है, वहाँ संगम तीर्थ बन जाता है। गोस्वामी जी का इशारा इसी त्रिपदा गायत्री की ओर है। उपासना, साधना और आराधना की त्रिवेणी। इस त्रिवेणी में स्नान करने से कौआ कोयल और बगुला हंस बन जाता है अर्थात त्रिपदा गायत्री के जप से उसकी आकृति तो वैसी ही रहती है लेकिन प्रकृति बदल जाती है। हमने भी इसी गायत्री का जप किया और ऋद्धि-सिद्धि, शरीर-बल, बुद्धि-बल, आत्म-बल सभी कुछ पाया है। जैसा हमने पाया है, वैसा सबको मिल सकता है। गायत्री माता सभी पुत्र-पुत्रियों पर समान रूप से अपनी कृपा की वृष्टि करती हैं। यह राजमार्ग सभी के लिए खुला है, बस इसके लिए साहस की आवश्यकता पड़ती है। गायत्री माता साहसी व्यक्ति पर ही कृपा की वर्षा करती हैं, कायरों और कमजोरों पर नहीं।

आगे गुरुदेव ने एक सच्ची घटना सुनाई।

बोले—बेटा! हम हिमालय पर गए थे, गंगोत्री से ऊपर हम कुछ समय वहाँ ठहरे थे। वहाँ दो महात्मा रहते थे। बिना वस्त्र के और अन्न भी नहीं खाते थे। मौन रहते थे। उनकी दाढ़ी–मूँछ बढ़ी हुई थी। दिन–रात भजन ही करते रहते थे। गरमी में बरफ पिघलने से दोनों की गुफा के सामने जो जमीन निकल आती थी उसमें वे सब्जियाँ बो देते थे। सब्जियों को गुफा में सुरक्षित रखकर उसी से साल भर अपना काम चलाते थे। एक महात्मा ने दूसरे महात्मा की थोड़ी जमीन ज्यादा साफ कर ली, इस पर दोनों महात्माओं में ऐसा झगड़ा हुआ कि उनकी दाढ़ी के बाल खिंचने से खून निकल आया। दोनों आपस में जब लड़ रहे थे तो दुर्वासा के अवतार दिखाई दे रहे थे। हमने सोचा, ये दोनों नंगे मौनी दिन–रात भजन करने वाले महात्मा हैं, लेकिन इन्होंने अपना क्रोध, वासना, तृष्णा नहीं छोड़ी है। ऐसे भजन से इनको क्या लाभ मिलेगा? जब तक व्यक्ति दोष दुर्गुणों को छोड़कर भजन नहीं करता तब तक उसका भजन करना उन महात्माओं की भाँति निरर्थक ही है। वह अपने समय को बरबाद करता है। उसको अध्यात्म का कोई लाभ मिलने वाला नहीं।

गुरु वंशिष्ठ ने भगवान राम को गायत्री मंत्र की दीक्षा दी और विश्वामित्र ने उन्हें बला और अतिबला की विद्या सिखाई। भगवान राम ने गायत्री मंत्र का जप किया। उसके साथ ही अपना सारा जीवन समाज सेवा में लगा दिया। ऋषियों की हड्डियों का ढेर देखकर राम क्षुब्ध हो गए और तभी राक्षसों को मारने का प्रण कर लिया। वे राक्षसों से संघर्ष करते रहे। राम हमारे आदर्श हैं लेकिन हम क्या करते हैं? बस, राम का नाम जपते रहते हैं। राम के आदर्श, सिद्धांत और राम का दर्शन, उससे हमें कोई मतलब नहीं है। हमने सरल काम पकड़ लिया है, राम के नाम की माला घुमाने का। राम के संदेश को जीवन में उतारने की बात हम सुनना ही नहीं चाहते। अध्यात्म के इस दोष को निकालना पड़ेगा। युग निर्माण योजना का यही मुख्य उद्देश्य है।

बेटा! राम ने रावण को मारा। रावण विलासिता का जीवन जीता था। सोने की लंका बना रखी थी। ऐश आराम का जीवन जीता था। उड़न खटोले (हवाई जहाज) में बैठकर यात्रा करता था। पराई स्त्री (सीता माता) को चुराया था। भगवान राम ने उससे संघर्ष किया और उसे मार गिराया। बेटा! पहले एक ही रावण था, उसे मारने के लिए भगवान ने अवतार लिया, परंतु आज तो करोड़ों व्यक्तियों की वृत्ति रावण जैसी है। भजन राम का करते हैं और अपनी वृत्ति रावण जैसी बना रखी है। रावण की भाँति अनाप-शनाप धन-दौलत इकट्‌ठी कर रखी है, एयर कंडीशंड कार में चलते हैं, हवाई जहाज की यात्रा करते हैं,बीमार पड़े रहते हैं, अनाप-शनाप खरचा करते रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों के मुख पर भले ही 'राम' हो लेकिन उनके अंदर रावण ही बैठा है। हमें उससे संघर्ष करना चाहिए। रावण की बहिन सूपर्णखाँ फैशन बनाकर घूमती थी। सूपर्णखाँ का असली नाम तो नीलमणि था, उसके नाखून सूप जैसे थे, इसलिए रावण उसे सूपर्णखाँ या सूपर्णखाँ कहता था। आज घर-घर सूप जैसे नाखून वाली सूपर्णखाँ मिल जाएँगी। सूपर्णखाँ फैशन बनाकर घूमती थी, दूसरों का चरित्र भ्रष्ट करती थी। भगवान राम का चरित्र भ्रष्ट करने का प्रयास किया, तो राम-लक्ष्मण ने उसका अपमान किया, उसकी नाक काट ली। आज भी समाज में जो सूपर्णखाँयें फैशन बनाकर हमारे नवयुवकों का चरित्र भ्रष्ट करती हैं, ऐसी बहिनों को हमें समझाना चाहिए कि बहिन जी आपकी शक्ल वैसे ही ठीक लग रही है, फिर क्रीम पाउडर पोतकर लिपिस्टिक लगाकर क्यों अपनी असली सुंदरता नष्ट कर रही हैं। बेटा! इसमें कमी हमारी भी है कि हम ऐसी बहिनों का सम्मान करते हैं। यदि ऐसी बहिनों का निरादर किया गया होता, उनका मजाक बनाया गया होता तो इस फैशन में कमी आ सकती थी। जो बहिनें समझाने से न मानें उन्हें व्यंग द्वारा सुधारने का प्रयास करना चाहिए। इससे फैशन परस्ती में कमी आएगी।

बेटा! रावण ने भजन तो किया था, परंतु वह दुष्प्रवृत्तियों में लिप्त था, दोष दुर्गुणों से भरा हुआ था, इसीलिए ब्राह्मण पुत्र होते हुए भी असुर कहलाता था। हमारी भी स्थिति आज ऐसी ही है। हम गायत्री मंत्र का जप करते हैं। राम, कृष्ण, शंकर, हनुमान का जप, भजन, पाठ-पूजा करते हैं, परंतु बीड़ी, सिगरेट, मांसाहार, फैशन परस्ती आदि दुष्प्रवृत्तियों से भरा जीवन जीते हैं। ऐसे जप अनुष्ठानों से रावण का कोई लाभ नहीं हुआ, तब हमको ही क्या लाभ मिल सकता है। अध्यात्म की इस भूल को ठीक करना चाहिए अन्यथा हमारा प्रत्येक युवक जब देखेगा कि इस अध्यात्म से कोई लाभ नहीं है तो वह नास्तिक होता चला जाएगा। ऐसे अध्यात्म के प्रति किसी की भी श्रद्धा कैसे बनेगी? कौन मानेगा ऐसे अध्यात्म को?

प्रत्येक आध्यात्मवादी को युग धर्म समझना चाहिए। आज जब समाज के सामने ज्वलंत समस्याएँ मुँह बाएँ खड़ी हैं, तब हम माला घुमाकर, गंगाजी नहाकर,जल चढ़ाकर, स्वर्ग का टिकिट चाहते हैं, यह अन्याय है, अधर्म है। इसमें सुधार करना ही होगा। जिसे दहेज की वेदी पर जलती बहिन-बेटियों की चीत्कार सुनाई नहीं देती, जिसे कन्या के पिता की पीड़ा का अनुभव नहीं होता, जिसे अत्याचार और अनाचार से सताई बहिनों की पीड़ा विचलित नहीं करती, उनके लिए माला घुमाना, कथा सुनाना सब पाप है। आग लगा दो ऐसे विकृत अध्यात्म को, धर्म के इस विकृत स्वरूप को। अब धर्म का, अध्यात्म का सही स्वरूप समझाने का समय आ गया है! अब भी यदि मेरे बच्चे नहीं जग सके तो भविष्य में उनकी आत्मा उनको कचोटेगी और फिर सिर्फ पछतावा ही साथ लगेगा। पछतावा इस बात का कि हमारे गुरु ने हमें समझाया था लेकिन हम ही मूर्ख निकले जो उनकी वाणी को महत्त्व नहीं दिया और जो श्रेय हमें मिलने को था उसे दूसरे लोग ले गए। ज्ञान यज्ञ की जो लाल मशल गुरु ने हमें सौंपी थी, उसे हमसे छीनकर दूसरे लोग

ले गए। अपने अभागेपन पर पछताना ही पड़ेगा। कहते-कहते गुरुदेव का चेहरा तमतमा गया। उनके मुख मंडल पर ऐसा ओज, ऐसा तेज हमने पहली ही बार देखा। देखकर हमारे रोंगटे खड़े हो गए। आज भी जब उस क्षण की याद आ जाती है तो खून-खौलने लगता है। आज ८६ वर्ष की अवस्था में जब हमारा खून खौल सकता है तो हमारे भाई-बहिन, जिन्होंने गुरुदेव के अंतकरण की पीड़ा को समझा है, उनके बताए मार्ग पर चलने से कैसे पीछे हट सकते हैं? हमें पूरा विश्वास है कि सामाजिक कुरीतियों को, दुष्प्रवृत्तियों को समाज से समूल नष्ट करने में हमारे भाई-बहिन कुछ भी कसर उठाकर नहीं रखेंगे। अपने को वीर पिता के मानस पुत्र होने का गौरव अनुभव करेंगे। ऋषि रक्त की गरिमा सुरक्षित रखेंगे। वीर माता के दूध की लाज रखेंगे। कुछ ऐसा करेंगे जिसे देखकर ऋषियुग्म मुस्करा कर हमारे ऊपर अनुदानों-वरदानों की वर्षा करें। अपनी गुरु सत्ता की प्रसन्नता हमारे लिए प्राणों की बलि देकर भी अभीष्ट है।

□

□ ***साहस ने हमें पुकारा है। समय ने, युग ने, कर्त्तव्य ने, उत्तरदायित्व ने, विवेक ने, पौरुष ने हमें पुकारा है। यह पुकार अनसुनी न की जा सकेगी।***

□ ***आत्म निर्माण के लिए, नव निर्माण के लिए हम काँटों भरे रास्ते का स्वागत करेंगे और आगे बढ़ेंगे।***

□ ***सत्य के लिए, धर्म के लिए, न्याय के लिए हम एकाकी आगे बढ़ेंगे और वही करेंगे जो करना अपने जैसे सजग व्यक्तियों के लिए उपयुक्त है।***

सब सिद्धियों का मूल अध्यात्म

एक बार जब गुरुदेव डबरा (ग्वालियर) आए तो हमने उनका पूरी श्रद्धा से आतिथ्य सत्कार किया। गुरुदेव प्रसन्न मुद्रा में बैठे थे। हमने पूज्य गुरुदेव से पूछा कि गुरुदेव! आप हमें अध्यात्म के मार्ग पर चलाकर ऋद्धि-सिद्धि मिलने की बात तो बता रहे हैं लेकिन हमारा जीवन तो भौतिकवादी रहा है, भौतिकवाद हमारी नस-नस में समाया हुआ है। आप हमें यह बतलाएँ कि अध्यात्म के मार्ग पर चलकर, क्या हम शरीर बल, बुद्धि बल और धन बल भी प्राप्त कर सकते हैं? यदि यह सब भी मिल सकता हो तो ही आपके बताए मार्ग पर चलेंगे अन्यथा तो फिर हमारा यह भौतिकवादी जीवन ही अच्छा है।

पूज्य गुरुदेव मुस्कराए और बोलेसूपर्णखाँबेटा! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया है। यह समस्या तुम्हारी ही नहीं अन्य लोगों की भी हो सकती है। देखो, अध्यात्म के मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति को अपना शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य ठीक रखना पड़ता है। तभी वह उपासना, साधना और आराधना में सफल हो सकता है। स्वस्थ नहीं होगा तो भजन कैसे करेगा। यदि आदमी में बुद्धि नहीं होगी, तो बेअकल आदमी कोई भी काम नहीं कर सकता है। वह अपना तथा परिवार का पेट भी नहीं भर सकता है। इसलिए बुद्धि बल भी बहुत आवश्यक है। धन के बगैर कोई काम नहीं हो सकता है। घर का खरच, बच्चों की पढ़ाई, मकान, लड़की की शादी बिना पैसों के कैसे होगी? यह सबकी समस्या है, लेकिन बेटा! तूने शरीर बल, बुद्धि बल और धन बल की बात तो की, परंतु आत्मबल को तो तू भूल ही गया। जब आत्मबल होता है तो अन्य सब बल स्वत: ही प्राप्त हो जाते हैं। अत: आत्मबल का बहुत महत्त्व है।

हमने पूछा—गुरुदेव! आत्म बल कैसे प्राप्त किया जा सकता है? तो गुरुदेव बोले—बेटा! आत्मबल गायत्री के अंतरंग पक्ष को, उसके आदर्शों और सिद्धांतों को, उनके दर्शन को व्यावहारिक जीवन में उतारने से आता है। रावण जब मरने लगा तो उसको एक शंका यह हुई कि मेरे पास शरीर बल, बुद्धि बल और धन बल तीनों राम से अधिक थे। शरीर भी मेरा बहुत बलवान था। बुद्धि भी मेरी बहुत तीव्र थी और धन के लिए तो मेरी सोने की लंका थी। राम के पास तीर कमान के अलावा कोई शस्त्र नहीं था। वानर भालुओं के पास तो बस जंगल के डंडे ही थे। हमारे सारे योद्धा एक से एक बलशाली, जिनकी सौ-सौ योजन की मूँछें थीं, किंतु उनको भी मार गिराया। वह कौन सा बल राम के पास था, जिससे मेरी इतनी विशाल सेना राम से हार गई। रावण ने यह प्रश्न भगवान राम से ही पूछा तो भगवान ने उत्तर दिया—रावण! तुम्हारे पास तीनों बल थे लेकिन आत्मबल नहीं था। उसी के अभाव में सारे बल कमजोर पड़ जाते हैं। रावण ने कहा—आत्मबल कैसे प्राप्त होता है? भगवान बोले-सत्य और न्याय का मार्ग अपनाने से आत्मबल आता है। जप के साथ ईश्वर के सिद्धांतों को जीवन में धारण करने से आत्मबल आता है। रावण बोला—मैंने तो बहुत तप किया, अपना सिर काट-काट कर शिवजी की पूजा की, फिर भी आत्मबल क्यों नहीं आया? भगवान बोले—जो व्यक्ति पवित्र, दोष दुर्गुणों से रहित जीवन जीता है, भगवान के गुणों को अपने अंदर ग्रहण करता है, समाज की सेवा करता है, उसमें ही आत्मबल आता है। तुमने भजन, पूजन, जप, तप व्रत तो किए लेकिन अपने दोष दुर्गुणों को नहीं छोड़ा, पराई स्त्री पर बुरी दृष्टि डाली,परनारी को चुराया, क्रोध, अहंकार, अत्याचार, अनाचार और दुराचार का साथ नहीं छोड़ा तो आत्मबल कहाँ से आएगा? ऐसा भजन, पूजन, तप और शीश काट-काटकर चढ़ाना सब व्यर्थ ही सिद्ध होता है।

फिर गुरुदेव ने हमें हनुमान का उदाहरण देकर समझाया कि हनुमान की क्या स्थिति थी? सुग्रीव के मंत्री थे। बालि ने अपने भाई सुग्रीव की पत्नी को छिन लिया था और सुग्रीव डर कर हनुमान के साथ ऋष्यमूक पर्वत पर छिपकर समय बिताते थे। वही हनुमान, जब पत्नि के अपहरण से व्यथित भगवान राम की सहायता के लिए उनके संपर्क में आए तो उनका आत्मबल कितना बढ़ गया। बेटा! परमार्थ का, दूसरों की सहायता का, समाज सेवा का कार्य करने वालों का आत्मबल बहुत बढ़ जाता है। जब हनुमान में आत्मबल आया तो उनमें शरीर बल भी इतना आ गया कि समुद्र को लांघ गए, पर्वत को उखाड़ लाए, लंका में रावण की सभा में ताल ठोककर खड़े हो गए। राम-लक्ष्मण को अपने कंधों पर बिठाकर पाताल से अहिरावण से छुड़ा लाए। सीता माता की खोज करके लाए। इतना शरीर बल उनको मिल गया था और धन बल की बात बताएँ तो भारत के सात लाख गाँवों में कम से कम एक मंदिर प्रति गाँव भी गिने तो सात लाख मंदिर हनुमान के होंगे। इतने मंदिर तो भगवान राम के भी नहीं हैं। इन मंदिरों की कीमत अरबों रुपया होगी और उनमें करोड़ों का भोग लग जाता होगा। इतना धन हनुमान को मिल गया और सम्मान श्रद्धा इतनी मिली कि आज भारत में सबसे अधिक भक्त हनुमान के हैं। बेटा! अध्यात्म के रास्ते पर जो भी चला उसे सभी कुछ मिलता चला गया।

हमने कहा—गुरुदेव! हनुमान का उदाहरण तो बहुत पुराना है,कोई और उदाहरण बताइए जिसने अध्यात्म के रास्ते पर चलकर सब कुछ पा लिया हो।

गुरुदेव बोले—बेटा! बुद्ध भगवान का नाम तो तुमने सुना है? हमने कहा—हाँ गुरुदेव! उनका साहित्य भी पढ़ा है। उनके पिता ने उन्हें महल से बाहर नहीं निकलने दिया, लेकिन जब वे महल छोड़कर जंगल में चले गए और अध्यात्म के मार्ग पर चल पड़े तो भगवान बुद्ध हो गए। उनकी सोने की मूर्तियाँ बनीं बर्मा, चीन,

लंका, जापान, जावा, सुमात्रा और सारे विश्व में उनका धर्म फैल गया। यदि राजा ही रहते तो उन्हें कौन जान सकता था। अध्यात्म के रास्ते पर चले तो राजा अशोक, राजा हर्षवर्धन ने अपनी सारी संपत्ति दे डाली। डाकू अंगुलिमाल और आम्रपाली वेश्या ने अपनी अनीति की कमाई उनके चरणों में अर्पित कर दी। हजारों भिक्षुक, भिक्षुणियों ने उनके धर्म का प्रचार किया। उनको शरीर भी स्वस्थ मिला, बुद्धि भी मिली और धन भी मिला। जब कोई असली अध्यात्म पर चलता है तो उसे सब कुछ मिल जाता है और नकली अध्यात्म पर चलने पर उसे कुछ नहीं मिलता है। बेटा! असली सोना तो महँगा ही आएगा। सस्ता मिलता है तो समझना, सोना नकली है। अध्यात्म के रास्ते पर तो साहसी व्यक्ति ही चल सकता है। कमजोर और बुजदिल इस मार्ग पर कैसे चल सकता है?

गुरुदेव बोले—एक विवेकानंद का उदाहरण है। नरेंद्र नाम का कायस्थ परिवार का लड़का था। उसके पिता का स्वर्गवास हो गया। वह स्वामी रामकृष्ण परमहंस से नौकरी माँगने गया। स्वामीजी ने कहा—काली माँ से माँग ले। जब काली माँ में उसने विश्व ब्रह्मांड के दर्शन किए तो उसने सोचा इतनी बड़ी शक्ति से मैं केवल पेट के लिए रोटी क्यों माँगूँ। पेट तो मैं मजदूरी करके भी भर सकता हूँ। उन्होंने कहा कि हे माँ! मुझे भक्ति दो, ज्ञान दो, शक्ति दो। जब वह नरेंद्र अध्यात्म के रास्ते पर चल पड़ा तो स्वामी विवेकानंद बन गया। विश्व में भारतीय संस्कृति की धर्मध्वजा फहरा दी। जमशेदजी टाटा को जब लंदन से स्टील कारखाने का परमिट मिला तब जिस होटल में जमशेद जी ठहरे थे, उसी में स्वामी जी ठहरे थे। जमशेद जी ने स्वामी जी से कहा कि क्या अध्यात्म में ऐसी शक्ति है जो यह बता दे कि भारत में कोयला, लोहा और पानी एक ही जगह कहाँ मिल सकता है? स्वामी जी ने कहा कल सुबह बतला देंगे। सुबह जमशेद जी स्वामी जी के पास पहुँचे। स्वामी जी बोले—बिहार में सिंहभूम

के पास साक्षी गाँव है, उसके पास जंगल ही जंगल है, उसे खरीद लो। वहाँ लोहा, पानी और कोयला पर्याप्त मिल जाएगा। जमशेद जी ने वहीं जमीन खरीदकर स्टील का कारखाना लगा लिया तो जमशेद जी मालामाल हो गए। यह धन जमशेद जी को स्वामी विवेकानंद की ही कृपा से मिला।

गुरुदेव ने हमसे कहा—बेटा! तुमने गाँधीजी को देखा है? हमने कहा—हाँ गुरुदेव! कई बार देखा है। गुरुदेव बोले—गांधी जी बड़े कमजोर वकील थे। पहला मुकदमा मिला तो उसे लड़ नहीं सके। मुवक्किल की दी हुई फीस भी वापस करनी पड़ी, लेकिन वही गांधी जी जब अध्यात्म के रास्ते पर चले तो कितने शक्तिशाली हो गए। महात्मा गांधी हो गए। उन्होंने अँगरेजों से कहा—अँगरेजो! भारत छोड़ो, और भारतीयों से कहा—करो या मरो। उनके दो वाक्यों ने भारत से अँगरेजों को निकाल दिया। उनकी एक आवाज पर जेलें भर गईं। लोग फाँसी पर लटक गए, गोली के सामने आ गए। इतने शक्तिशाली गांधी जी कैसे हो गए? अध्यात्म के रास्ते पर चलकर हो गए। धन इतना मिला कि उनकी हजारों मूर्तियाँ लगी हैं। करोड़ों के स्मारक बने हैं। यदि वकील ही रहे होते तो दस-पाँच लाख से ज्यादा नहीं कमा पाते। दो चार कोठियाँ बनवा सकते थे बस। लेकिन जब सच्चे अध्यात्म के रास्ते पर चले तो धन के साथ-साथ बुद्धि भी मिली। बुद्धि ऐसी कि वाइसराय भी उनसे बात करने में घबराता था। उनका शरीर भी स्वस्थ व मजबूत था। शरीर बल, धन बल, बुद्धि बल सम्मान सब कुछ उन्हें मिला था।

बेटा! आगे आने वाले समय में युवा वर्ग कथा, भजन, पूजन, स्नान तीर्थ यात्रा पर विश्वास नहीं करेगा। वह तथ्यों पर विश्वास करेगा। उसे प्रमाणित करके बताना होगा कि अध्यात्म के रास्ते चलने पर क्या-क्या उपलब्धियाँ हो सकती हैं। बेटा! तुम हमें देखो, हम तुम्हारे सामने हैं। जब हम अध्यात्म के रास्ते पर चले तो जिस धन की बात तुम बार-बार करते हो कितना

मिला। हमने चौबीस शक्ति पीठ बनवाने को कहा था जो चौबीस सौ बनकर तैयार हो गए। इसका हिसाब लगाया जाए तो करोड़ों रुपयों में पहुँचेगा। शांति कुंज को देखो, ब्रह्मवर्चस् और गायत्री तपोभूमि को देखो कुल मिलाकर अरबों की संपत्ति होगी, करोड़ों का बैंक बैलेंस होगा। इतना धन मिला।

हमने कहा—हाँ गुरुदेव! यह तो हम देख रहे हैं। वे बोले—अब बुद्धि बल की बात बताएँ। चारों वेद, उपनिषद, दर्शन, ब्राह्मण, स्मृति, पुराण सारे धार्मिक ग्रंथों का भाष्य कर दिया। प्रज्ञापुराण लिख दिया। जिसकी कथा घर-घर में होती है। विज्ञान अध्यात्म को ढोंग और अंध विश्वास कहता था और अध्यात्म विज्ञान को गाली देता था। हमने अध्यात्म और विज्ञान को मिला दिया। हमने दोनों को एकदूसरे का पूरक सिद्ध कर दिया, कुत्ता और बिल्ली की शादी करा दी। कितना बुद्धि बल आ गया? शरीर बल की बात बताएँ। हमारा शरीर बिलकुल स्वस्थ है, कोई बीमारी नहीं है। एक बदमाश ने हमारे ऊपर अकेला पाकर हमला कर दिया। उसके पास बहुत बड़ा छुरा और सात फायर की पिस्तौल थी। हमने उसका पिस्तौल और छुरा दोनों छुड़ा लिए। कितना शरीर बल है हमारे अंदर? बेटा! हमने त्रिपदा गायत्री को जपा है। गायत्री के अंतरंग पक्ष को अपने व्यवहार, आचरण और चिंतन में उतारा है। कोई भी व्यक्ति उपासना, साधना और आराधना द्वारा आत्मबल पैदा कर सकता है। जब आत्मबल आता है तो तीनों बल अपने आप आ जाते हैं। हमने कितने ही उदाहरण, प्रमाण देकर तुम्हें समझा दिया।

हमने कहा—गुरुदेव! आपने हमारा और हमारे सब भाई-बहिनों का भ्रम दूर कर दिया, यह आपका बहुत बड़ा उपकार है, जिसे हम जीवन भर नहीं भुला पाएँगे। हम लोग अब अध्यात्म के सच्चे स्वरूप को सबके सामने रखेंगे। गुरुदेव ने कहा—"आज बच्चों में, युवकों में अध्यात्म के प्रति घृणा पैदा हो गई है। आज

अध्यात्म का यह जो विकृत स्वरूप है, वह अध्यात्म की लाश है। इसको या तो जीवित करना पड़ेगा या जलाना पड़ेगा,अन्यथा यह बदबू फैलाएगी। असली अध्यात्म के लिए पवित्र, दोष दुर्गुणों से रहित जीवन जीना होता है। बुराइयों को छोड़ना और अच्छाइयों को ग्रहण करना होता है। भगवान की उपासना, अपनी साधना और समाज की आराधना करनी पड़ती है। आज तो बस थोड़ा सा जप और यज्ञ करके ही संतोष कर लेते हैं। इस भूल का सुधार कर लेना चाहिए।''

समाज में कुरीतियाँ फैली हैं, अपने अंदर जो दोष दुर्गुण हैं और जिन व्यसनों में हम फँसे हुए हैं, उनको दूर करने के लिए पूज्य गुरुदेव के क्रांतिकारी एवं प्रभावशाली विचारों की डेढ़-डेढ़ रुपये वाली पॉकेट बुक्स का प्रकाशन किया गया है। प्रत्येक व्यक्ति को ये पुस्तकें पढ़ना चाहिए और दूसरों को पढ़ानी चाहिए। साहित्य के माध्यम से पूज्यवर के विचार लोगों तक पहुँचाकर यदि हम उनका चिंतन बदल सकें तो ही स्थायी परिवर्तन आ सकता है। यही विचार क्रांति है, यही ज्ञानयज्ञ है। विचारों के परिवर्तन से जो सामाजिक परिवर्तन होगा वही स्थायी और फलदायी होगा। प्रशासन, पुलिस, न्यायालय, दंड के भय से स्थायी परिवर्तन संभव नहीं है। इस विचार क्रांति के लिए हर भावनाशील व्यक्ति को दो घंटे का समय निकालना ही चाहिए। एक गाँव के व्यक्तित्व जले बैठे रहें, एक देश के व्यक्तित्व जले बैठे रहें परंतु आज तो ६०० करोड़ व्यक्तियों के व्यक्तित्व जलते जा रहे हैं। इस स्थिति में कोई पत्थर हृदय ही होगा जो इसे देखता रहे और हाथ पर हाथ धरे बैठा रहे। अन्यथा इस आग में तो प्रत्येक समझदार व्यक्ति को एक घड़ा पानी डालना ही चाहिए। कुछ समय, कुछ श्रम, कुछ धन समाज सेवा में लगाना ही चाहिए।

□

समर्पण की प्रबल प्रेरणा

पूज्य गुरुदेव जब भी ग्वालियर आते हमारे पास कई-कई दिन ठहरते। हमको समझाया करते कि बेटा! मिशन को तेरी आवश्यकता है। अब तू भौतिकवादी जीवन को छोड़। हम चुप हो जाते, क्योंकि भौतिकवाद हमारी नस-नस में भरा पड़ा था। ऐश आराम का जीवन छोड़ना हमको कष्टदायक मालूम पड़ता था। बहुत बार हमें समझाया। हम कहते—अभी सोचेंगे। गुरुदेव की बताई साधना त्रिपदा गायत्री का जप करते रहे। एक बार गुरुदेव आए। स्वयं लेटे हुए थे, हमें अपने पास बैठाकर बोले—बेटा! तूने विवेकानंद का नाम सुना है? बड़ा ही विलक्षण व्यक्ति था। रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। जब विदेशी लोग वेदों को गड़रिया के गीत कहते थे, तब उन्होंने भारतीय संस्कृति का प्रचार विदेशों में किया। जब वे भारत वापस आए तो उनके लिए १२ घोड़ों की बग्घी तैयार की गई लेकिन तमाम सेठ, साहूकार और बड़े-बड़े अफसरों ने कहा—स्वामी जी को घोड़ों की बग्घी पर नहीं बिठाया जाएगा। घोड़ों को हटा लिया गया और उस बग्घी को सब प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने स्वयं खींचा। जानते हो यह सम्मान स्वामी जी को क्यों मिला? स्वामी जी का संपर्क जब रामकृष्ण परमहंस से हुआ तो उन्होंने अपनी सारी शक्ति विवेकानंद को ट्रांसफर कर दी थी। उन्हीं को क्यों इतनी शक्ति दी? इसका कारण यह है कि उन दोनों में एक समझौता हो गया था। स्वामी विवेकानंद ने स्वामी रामकृष्ण परमहंस को समर्पण कर दिया था कि अब हम आपका ही काम करेंगे। शरीर मन, बुद्धि, भावनाएँ सब आपके ही कार्य में लगाएँगे। जब विवेकानंद ने यह समर्पण

कर दिया तो शक्ति मिली, साहस मिला, बुद्धि मिली, सब कुछ मिल गया।

इस प्रकार अर्जुन ने जब भगवान श्रीकृष्ण के सम्मुख समर्पण किया और कहा कि हम आपके ही आदेश का पालन करेंगे, तो शक्ति मिली, ज्ञान मिला, सब कुछ मिला। बेटा! शक्ति प्राप्त करने की एक विधि तो यह है कि जप, तप, ध्यान, व्रत, उपवास, तीनों शरीरों की साधना करनी पड़ती है। इस सब में तो कष्ट सहन करना पड़ता है। दूसरी एक विधि और है, वह है समर्पण की। बेटे! जप-तप तो तुम्हारे लिए हम कर लेंगे। हमारी शक्ति तुमको मिलेगी।

पूज्यवर के कहने से, बहुत दिन बाद हमने समर्पण कर दिया और कह दिया कि अब हम आपके ही आदेश का पालन करेंगे। शीघ्र ही मिलों का झंझट छोड़ रहे हैं। मिलों से छुटकारा पाने पर हमने गुरुदेव को पत्र भी लिख दिया कि हम मथुरा आ रहे हैं। गुरुदेव का पत्र आया कि तुम अकेले मत आना, हम तुम्हें अपने साथ लेकर आएँगे। इस घटना का वर्णन अपने परिजनों के सम्मुख इसलिए किया है कि परिजन यह समझ लें कि समर्पण का महत्त्व क्या होता है। यहाँ तपोभूमि में प्रखर प्रज्ञा-सजल श्रद्धा के प्राण प्रतिष्ठा समारोह के अवसर पर शपथ पत्र भरकर हजारों परिजनों ने गुरुदेव के साथ एक समझौता किया। साथ ही समर्पण किया कि पूज्य गुरुदेव के सपनों को साकार करेंगे और उनके द्वारा दी गई आंदोलनों की योजना को अपने-अपने क्षेत्र में चलाकर युग परिवर्तन के संकल्प को पूरा करने में सहयोग देंगे। जिन परिजनों ने सच्चे हृदय से समर्पण किया है, उनको निश्चय ही शक्ति मिलेगी और इतिहास में उनका नाम होगा।

वंदनीया माताजी ने एक दिन कहा कि अब हम यहाँ शिविर लगाना प्रारंभ करेंगे। इसकी व्यवस्था तुम सँभालोगे। भोजन व्यवस्था माताजी ने सँभाल ली। शिविर में २०-२५ भाई आते थे। माता जी

उनकी देखभाल माँ की तरह ही करती थीं। कोई भाई बीमार हो जाता तो उसके कपड़े धोतीं, सफाई करतीं, खाना खिलातीं। सब भाइयों को ऐसा ही अनुभव होता कि हमने इसी माँ के पेट से जन्म लिया है। शायद माताजी सूर्योदय से पहले भजन कर लेती हों लेकिन हम उनको हमेशा काम में व्यस्त देखते थे। हमसे वे हमेशा कहतीं कि निःस्वार्थ सेवा ही असली धर्म है। माला घुमाना तो आसान है लेकिन समाज में फैली कुरीतियों को दूर करने और अपनी दुष्प्रवृत्तियों को दूर करने में जो अपना समय, श्रम और धन का सदुपयोग करते हैं वे ही असली धार्मिक व्यक्ति हैं। हम लोग भजन, पूजन, आरती, कथा, तीर्थ यात्रा तो कर लेते हैं लेकिन जब सेवा का समय आता है, तब बगलें झाँकने लगते हैं। हम सब भाई-बहिनों को माताजी से यह शिक्षा लेनी चाहिए और मिशन के कार्यों के लिए दो घंटे का समय प्रतिदिन निकालने का संकल्प लेना चाहिए।

शिविर चल रहे थे। एक दिन प्रवचन के बाद पूज्य गुरुदेव गायत्री मंदिर के सामने बैठे थे, तभी एक सेठ आया, उसने कहा—गुरुदेव! आप अखण्ड ज्योति संस्थान पैदल आते जाते हैं, गरमी का समय है, हम आपको एक कार देंगे। गुरुदेव ने कहा—नहीं बेटा ! पैदल आने जाने से स्वास्थ्य ठीक रहता है। सेठ चला गया तो हमने कहा-गुरुदेव! कार दे रहा था तो ले लेते । आने-जाने में परेशानी तो होती ही है। गुरुदेव ने कहा—बेटा! तुम नहीं समझोगे, अगर हम कार में बैठेंगे तो तुम लोग हवाई जहाज में बैठोगे। यह थी पूज्यवर की सादगी और विलासिता से अलगाव। पूज्य गुरुदेव जब हमारे साथ जलपाईगुड़ी गए तो रेल यात्रा में अपने खाने के लिए चना चिड़वे ले गए और उसी से तीन दिन की यात्रा पूरी कर दी। मिशन के कामों में लाखों रुपया खरच करने में तनिक भी देर नहीं लगाते थे और अपने ऊपर चार आने खरच करने से पहले बहुत सोचते थे। इन सब विशेषताओं के

कारण ही इतना बड़ा मिशन आज खड़ा करके रख दिया। बड़ा कार्य करने वालों को त्याग तपस्या का जीवन जीना पड़ता है। महात्मा गांधी ने त्याग तपस्या का जीवन जिया, देश को आजाद करा दिया। बाद में उनके अनुयायी उनकी लोकप्रियता को बेचकर खाते रहे। उनके सिद्धांतों को छोड़ दिया। गांधीवादी यदि गांधी जी के आदर्शों पर चलते, उन्हीं की भाँति त्याग-तपस्या का जीवन जीते तो उनकी लोकप्रियता बनी रहती। परम पूज्य गुरुदेव औघड़दानी थे। अपरिग्रह उनके स्वभाव का अंग बन गया था। शिविर चल रहे थे। एक सेठ जी आए, उन्होंने गुरुदेव के हाथों में नोटों की गड्डी थमा दी। गुरुदेव बोले—हम इसका क्या करेंगे? लेकिन वह सेठ पीछे पड़ गया बोला—मुझे तो ये रुपये आपको देने ही हैं। हमारे सामने की बात है। गुरुदेव हमें और सेठ जी को बाजार ले गए। उन पैसों से कंबल खरीदे। सरदी का समय था। गरीब लोग जो आग के सहारे, सड़क के किनारे समय व्यतीत करते थे, उनको एक-एक कंबल देते गए और सब कंबल बाँट दिए। पूज्य गुरुदेव दान के एक-एक पैसे को समाज का पैसा समझते थे और समाज के ही काम में लगा देते थे। सबसे यही कहते थे कि समाज के पैसे को व्यक्तिगत खरचों में नहीं लगाना चाहिए। दान के पैसों को जो अपने व्यक्तिगत खरचों में, अनाप-शनाप विलासिता की वस्तुओं में खरच कर देता है, वह आध्यात्मवादी नहीं है।

शिविरों में गुरुदेव इंद्रिय निग्रह पर बहुत जोर देते थे। वे इंद्रियों के दोष बतलाते थे कि इन दोषों के कारण किसको कितनी हानि उठानी पड़ती है। उन्होंने आँखों का दोष बताया। पतंगे में आँख का दोष होता है, वह दीपक की लौ को देखकर उसमें जलकर मर जाता है। हमें अपने दृष्टि दोष को ठीक करना चाहिए। किसी को भी किसी की बहिन-बेटी को बुरी नजर से नहीं देखना चाहिए। बड़ी है तो माँ की दृष्टि से, बराबर

की है तो बहिन की दृष्टि से और छोटी है तो बेटी की दृष्टि से देखना चाहिए। अर्जुन की सुंदरता पर मुग्ध होकर उर्वशी अप्सरा ने उससे अपने जैसे पुत्र की कामना की तो अर्जुन ने कहा—देवि ! पुत्र ही होगा यह निश्चित नहीं, दूसरे मेरे जैसा ही हो यह भी निश्चित नहीं है, अतः उचित यही है कि मुझे ही आप अपना पुत्र मान लें। अर्जुन की इस दृष्टि पवित्रता के कारण ही वह महाभारत के युद्ध के लिए स्वर्ग से शक्ति प्राप्त कर सका था। हमने गायत्री माता की मूर्ति इसीलिए षोडश वर्षीय कन्या जैसी बनाई है, जिसे देखकर हमारी दृष्टि पवित्र होती रहे। इस अभ्यास से हर लड़की में हमें गायत्री माता के दर्शन होते हैं। सच्चा अध्यात्मवादी आँखों से अपनी शक्ति को क्षीण नहीं करता है। हमें अपने आँखों के दोष को दूर करना चाहिए।

फिर पूज्यवर ने कान का दोष बताया। हिरन इतनी तेजी से छलांग लगाता है कि तीर उसको बेध नहीं सकता, लेकिन तीर की सनसनाहट की आवाज सुनने के लिए हिरन थोड़ा रुकता है, तभी तीर उसके पेट में घुस जाता है और हिरन वहीं प्राण छोड़ देता है। शिकारी उसकी खाल उधेड़ देता है, कान के दोष के कारण हिरण को ऐसी दुर्गति होती है। आज हमारे युवक-युवतियाँ सिनेमा के भद्दे गाने सुनते हैं, अपना चिंतन, चरित्र बिगाड़ते हैं और कान के दोष के कारण कितनी हानि उठाते हैं। हमें यह दोष दूर करना चाहिए।

अब नाक का दोष बताते हुए पूज्य गुरुदेव बोले—भौंरे में नाक का दोष होता है। वह खुशबू के लालच में कमल के फूल पर बैठ जाता है। शाम हो जाती है तो भी खुशबू के लालच में बैठा ही रहता है। सूर्यास्त के साथ ही कमल का फूल बंद हो जाता है और भौंरा भी फूल में बंद हो जाता है। हाथी आता है, सूँड से कमल का फूल तोड़ता है और खा जाता है। इस प्रकार भौंरा हाथी के पेट में पहुँच जाता है। नाक के दोष के कारण भौंरे की कैसी दुर्गति होती

है ! हर सुगंधित वस्तु अच्छी ही हो ऐसा नहीं होता। गंध के आकर्षण से बचना चाहिए। क्रीम, पाउडर, सुगंधित तेल विलासिता में आते हैं। हमें नाक के दोष को दूर करना चाहिए अन्यथा भौंरे जैसी दुर्गति हो सकती है।

गुरुदेव ने मुँह का, जीभ का दोष बताते हुए कहा-मछली जीभ के स्वाद के लिए आटे को खाती है। उसी के साथ काँटा भी उसके मुँह में फँस जाता है और शिकारी की पकड़ में मछली जीभ के दोष के कारण आ जाती है और पकौड़ी बनाकर खा ली जाती है। मुँह के दोष के कारण मछली की कैसी दुर्गति, हुई ! हम भी अभक्ष्य भोजन करते हैं। मांस, मछली, शराब, बीड़ी, सिगरेट, गुटखा न जाने क्या-क्या खाते-पीते रहते हैं। झूठ बोलते हैं, दूसरों को गिराने वाले शब्द कहते हैं, इससे हमारी क्या दुर्गति होगी, यह स्वयं ही सोच लेना चाहिए।

स्पर्श का दोष बताते हुए पूज्य गुरुदेव बोले—बेटा ! हाथी में स्पर्श का दोष होता है। इसी दोष के कारण वह शिकारी के चंगुल में फँस जाता है और पकड़ा जाता है। हाथी पकड़ने वाले जंगल में एक बड़ा गड्ढा खोदते हैं और उसमें एक सुंदर सी नकली हथिनी बनाकर खड़ी कर देते हैं। गड्ढे में उतरने को सीढ़ी होती है, जैसे ही हाथी उतरता है, सीढ़ी गिर जाती है। एक दो सप्ताह भूखा रहने से कमजोर हो जाता है, तब उसको निकालकर उससे बोझा ढुलवाने का काम लेते हैं। हथिनी को स्पर्श करने के दोष के कारण हाथी की क्या दुर्गति हुई, इससे सभी को शिक्षा लेनी चाहिए। अध्यात्मवादी को स्पर्श दोष से बचना चाहिए। एक इंद्रिय दोष के कारण जब यह दुर्गति होती है तो जिस व्यक्ति में पाँचों इंद्रिय दोष हों तब उसकी क्या हालत होगी ? कोई व्यक्ति इंद्रियों का तो दुरुपयोग करता है और भजन, पूजन, कथा, स्नान, तीर्थ सब करता है, तब उसको अध्यात्म का कोई लाभ नहीं मिल पाता है।

गुरुदेव बोले—बेटा ! मनुष्य को दो इंद्रियाँ सबसे अधिक परेशान करती हैं। एक स्वादेंद्रिय और दूसरी जननेंद्रिय । जो व्यक्ति स्वादेंद्रिय को साध लेता है, उसके लिए अन्य इंद्रियों का संयम रखना आसान हो जाता है। स्वादेंद्रिय के संयम के लिए ही हम शिविरों में पंचगव्य पिलाते हैं, जिसमें गाय के गोबर का रस, गौ मूत्र, दूध, दही, घी मिलाया जाता है। इसे पीकर मनुष्य अपनी स्वादेंद्रिय पर नियंत्रण रख सकता है। इसके साथ ही शिविरों में नमक और शक्कर छोड़ने पर जोर देते हैं। इससे इंद्रिय संयम का अभ्यास हो जाता है कि अध्यात्म का लाभ लेने के लिए बहुत आवश्यक है।

लोग गुरु को, भगवान को अपनी इच्छा पूर्ति का साधन मान बैठे हैं। उसे मनमरजी से चलाना चाहते हैं। साधनात्मक जीवन में यह विडंबना संभव नहीं । इसकी शुरूआत ही सद्गुरु में अपनी समस्त इच्छाएँ विसर्जित करने से होती है। गुरू धोबी की तरह पीट-पीट कर धोता है, धुनिए की तरह धुनता है।

देवाराधन का तत्त्वदर्शन

शिविर चल रहे थे, तब गुरुदेव के पास थोड़ी देर नित्य प्रति बैठने का समय मिलता था। एक दिन पूज्यवर से हमने पूछा— गुरुदेव! आज इन देवताओं के विषय में हमें कुछ बतलाइए। दुनिया में देवताओं की झड़ी लगी है। घर-घर में अलग-अलग देवता पूजे जाते हैं। कौन सा देवता सबसे अच्छा है, जिसे हमें पूजना चाहिए? गुरुदेव हमारी बात पर मुस्कराए और बोले—बेटा! देवता बाहर नहीं भीतर है। भीतर के देवता को जगाने के लिए हम बाहर देवताओं के मॉडल अर्थात मूर्ति बनाते हैं, जिसे जो देवता अपने अंदर जगाना हो, उसे उसी देवता की उपासना करनी चाहिए। हमने पूछा—गुरुदेव! इन दिनों हनुमान जी के सबसे ज्यादा भक्त हैं। अतः आप हमें हनुमान जी की मूर्ति के बारे में और उनकी पूजा के बारे में बताइए! गुरुदेव बोले—बेटा! हनुमान जी ने कोई अनुष्ठान, भजन, माला, तीर्थ, स्नान, उपवास, दान आदि किया, कह नहीं सकते लेकिन उन्होंने राम के काम अवश्य पूरे मनोयोग एवं समर्पण की भावना से किये थे। उनका एक ही सूत्र था—

"राम काज कीन्हे बिना, मोहि कहाँ विश्राम"

हनुमान जी हमेशा राम के काम में ही लगे रहते थे। राम का आदेश हुआ तो लंका पहुँचे। लंका जलाई, सीता का पता लगाकर आए, समुद्र को बाँधा, पहाड़ उखाड़कर लाए और कितने ही बड़े-बड़े काम उन्होंने कर दिखाए। हनुमान जी ने अपने इष्ट की आज्ञा का पालन किया और उनका काम किया। हम भी यदि हनुमान के सच्चे भक्त बनना चाहते हों, तो हमें भी भगवान की इस दुनिया को सुंदर, सुव्यवस्थित बनाने के लिए सामाजिक कुरीतियों को दूर करने तथा व्यक्तिगत दुष्प्रवृत्तियों, दुर्व्यसनों को दूर करने में अपने

समय का सदुपयोग करना चाहिए। हनुमान जी की तरह असुरता और निकृष्टता के विरुद्ध संघर्ष करना चाहिए। यदि हम यह सब करने लगें तो हनुमान जी हमसे प्रसन्न हो जाएँगे कि यह आदमी तो हमारी परंपरा का निर्वाह कर रहा है और फिर प्रसन्न होकर अनुदानों-वरदानों की वर्षा करेंगे तो जीवन धन्य हो जाएगा लेकिन हम तो मूर्ति को ही हनुमान मान बैठे हैं और उस पर चोला चढ़ाने, भोग लगाने, प्रणाम करने और मनौती मनाने तक ही अपना मतलब रखते हैं। हनुमान जी को खुशामद पसंद नहीं है। उन्हें तो भगवान का तथा समाज का काम पसंद है। उन्होंने रावण के खुशामदियों को तो पकड़-पकड़कर मारा और रावण की अनीति का विरोध करने वाले, अनीति का साथ छोड़ने वाले विभीषण को गले लगाया। हनुमान की भक्ति यही है कि हम उनकी परंपरा का निर्वाह करें, उनके आदर्शों पर चलें और इसके लिए अपने अंदर के हनुमान को जगाएँ।

पूज्य गुरुदेव ने हमें एक कथा सुनाई। बोले—नारद पुराण में एक कथा आती है। एक बार नारद जी आकाश मार्ग से भ्रमण कर रहे थे कि एक देवदूत दिखाई दिया। उसके हाथ में एक पुस्तक थी। नारद जी ने पूछा—आपके हाथ में यह कैसी पुस्तक है? देवदूत बोला—इसमें भगवान के भक्तों की सूची है। नारद जी बोले—इसे हम देख लें? देवदूत ने पुस्तक नारद जी को दे दी। नारद जी ने पूरी पुस्तक पलटकर देखी लेकिन कहीं नारद जी का नाम नहीं था। नारद जी बड़े दुःखी हुए। वे अपने आपको भगवान का सबसे बड़ा भक्त समझते थे। दूसरे दिन फिर वह देवदूत दिखाई दिया। पुस्तक हाथ में देखकर नारद जी बोले—आज आपके हाथ में यह कैसी पुस्तक है? देवदूत ने कहा—इसमें उन व्यक्तियों की सूची है, जिनकी भक्ति भगवान स्वयं करते हैं। नारद जी ने कहा—इसे हम देख लें ? नारद जी ने जब पुस्तक खोली तो उसमें सबसे पहले नारद का ही नाम था, क्योंकि नारद जी मन से भजन और

शरीर से भगवान का काम करते रहते थे। जो भगवान का काम करता है, भगवान उसकी भक्ति स्वयं करते हैं। भगवान को चापलूसी, स्तवन, वंदन, नमन, रोना, गिड़गिड़ाना आदि पसंद नहीं है। उसे ईश्वरीय अनुशासन का पालन करने वाले और ईश्वर का काम करने वाले पसंद हैं। इसे यों भी कह सकते हैं कि हम जो भी कार्य करें उसे ईश्वर का कार्य समझकर ही करें। ऐसा करने से निष्काम भाव आता है और हमारा हर कार्य ईश्वर की सेवा बन जाता है। इस प्रकार हम ईश्वर की सेवा अधिक समय तक कर सकेंगे। बेटा भजन तो हम अपने लिए करते हैं। भजन से ईश्वर प्रसन्न नहीं होता है। भजन से हमारा अंतःकरण पवित्र होता है। हमारी मानसिक और आत्मिक शक्तियों का विकास होता है। ईश्वर को प्रसन्न करना हो तो हमें उसका कार्य करना चाहिए। लोगों में ईश्वर के सिद्धांतों और आदर्शों में आस्था जगाने का प्रयत्न करना चाहिए आज का सबसे बड़ा संकट आस्था संकट है। इसलिए संकट मोचन हनुमान के भक्तों को देव संस्कृति के उत्कृष्ट आदर्शों और सिद्धांतों में आस्था जगाने का कार्य करना ही चाहिए। अब मनुष्य का यह निश्चित मत बन गया है कि आदर्शों और सिद्धांतों पर चलने पर घाटा ही घाटा है। इस मूढ़ मान्यता को बदलने का प्रयास कर हनुमान भक्त को करना चाहिए। तभी हम हनुमान भक्त कहलाने के अधिकारी होंगे।

अच्छा बेटा ! एक बात बताओ। एक आदमी तुम्हारे घर रोज नहा-धोकर सुबह आ जाया करे और माला लेकर घर के एक कोने में तुम्हारे नाम की माला जपता रहे और बदले में रोटी कपड़ा और धन-दौलत माँगे और एक दूसरा आदमी तुम्हारे घर आए और घर की सफाई करे, कपड़े धोए, बर्तन साफ करे, खाना बनाकर खिला दे और बदले में कुछ न माँगे तो तुम्हें कौन सा आदमी पसंद आएगा ? हमने कहा—गुरुदेव ! हमें दूसरा आदमी पसंद आएगा। हम उसे इनाम भी देंगे। सुनकर गुरुदेव बोले—

बस, इसी प्रकार भगवान को भी काम करने वाला आदमी पंसद है और उसे ही परमात्मा अपनी शक्तियाँ दैवी गुणों के रूप में देता है। हमने पूछा—गुरुदेव! देवता दैवी गुण ही देते हैं ? क्या धन, मकान, जायदाद, प्रतिष्ठा नहीं देते हैं? गुरुदेव बोले—जिसके पास जो कुछ होगा वही तो देगा, देवताओं के पास धन, दौलत, मकान कहाँ हैं जो वे देंगे। देवताओं के पास दैवी गुण है। जब ये दैवी गुण व्यक्ति में आ जाते हैं तो भौतिक उपलब्धियाँ प्राप्त करना भी उसके लिए आसान हो जाता है अथवा फिर उसे उनकी आवश्यकता ही नहीं रहती। इतना कहकर पूज्यवर खड़े हो गए और बोले—अब आगे की बात फिर करेंगे। हमने कहा—गुरुदेव! अभी तो शंकर, राम, कृष्ण कई देवताओं के बारे में आपसे पूछना है। गुरुदेव बोले—अब एक ही दिन में सारा ज्ञान ले लेगा। इस ज्ञान को साथ ही साथ पचाता भी चल, आचरण में भी ढालने का प्रयास कर, तभी इसका लाभ मिलेगा। हमने सोचा, यदि दुनिया में गुरुदेव का अवतार न हुआ होता तो ये ढोंगी धर्माचार्य धर्म का सत्यानाश कर देते और फिर कार्लमार्क्स का यह कहना सत्य साबित हो जाता कि धर्म अफीम की गोली है।

अगले दिन हमने पूज्यवर से शंकर भगवान की भक्ति और उपासना के बारे में समझाने का अनुरोध किया तो गुरुदेव बोले—शंकर भगवान हमारे अंदर सोए पड़े हैं, उनको जगाना है। भगवान शंकर के बहिरंग स्वरूप से ही उनके अंतरंग पक्ष की व्याख्या आसान होगी। भगवान शंकर की जटाओं से गंगा निकलती है। गंगा अर्थात पवित्रता, मस्तिष्क में पवित्र चिंतन, शुद्ध विचार होने चाहिए। हमें सोचना चाहिए कि मैं भगवान का पुत्र अर्थात भगवान हूँ। जो कार्य भगवान ने किए, जिन सिद्धांतों का पालन उन्होंने किया, उनका ही पालन मुझे भी करना चाहिए। शेर का बच्चा शेर और हाथी का बच्चा हाथी तथा गुरु का बच्चा गुरु। हमारे गुरु ने सारा

जीवन समाज की सेवा में लगा दिया, तो हम भी वही कार्य करेंगे। गुरु के जीवन चरित्र को अपने जीवन में प्रवेश कराएँगे। जो आशाएँ गुरु ने हमसे लगा रखी हैं, उनको पूरा करेंगे। जो शपथ हमने ली है उसे पूरा करेंगे, ऐसा उत्कृष्ट पवित्र और शुद्ध चिंतन हमें करना चाहिए। इसी के प्रतीक के रूप में शंकर की जटाओं से गंगा निकली है।

भगवान शंकर के सिर पर चंद्रमा है। चंद्रमा शीतलता का, शांति का प्रतीक है। इससे हमें प्रेरणा लेनी चाहिए कि हम क्रोध नहीं करेंगे। दिमाग को हमेशा ठंढा रखेंगे। बेटा ! सुकरात की पत्नी बड़ी कर्कश स्वभाव की थी। सुकरात से नित्य प्रति कितने ही लोग सत्संग करने आया करते थे। एक दिन प्रातःकाल कुछ विद्वानों के साथ सत्संग चल रहा था। उसकी पत्नी ने गाली देना प्रारंभ कर दिया। जब इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ तो उसने बर्तन साफ करने के बाद बचा हुआ गंदा पानी सबके ऊपर डाल दिया। सुकरात बोले—देवी! हम तो समझते थे जो गरजते हैं वे बरसते नहीं हैं, पर आज तो जो गरजे वे बरसे भी। यह सुनकर उनकी पत्नी बहुत शर्मिंदा हुई। विद्वान आगंतुकों ने कहा कि महात्मन, यह स्त्री आपके लायक नहीं है। इस पर सुकरात ने कहा—नहीं ! यह स्त्री मेरे ही लिए उपयुक्त है। यह परीक्षण करती रहती है कि सुकरात किस मिट्टी का बना है ? हमें भगवान शंकर के चंद्रमा से यह प्रेरणा लेते रहना चाहिए कि हमें अपना मानसिक संतुलन बनाए रखना है। रोष केवल दुष्टता, अनीति, अत्याचार के विरुद्ध ही प्रकट करना चाहिए।

भगवान शंकर भस्म लगाते हैं, मुंडों की माला पहनते हैं और मरघट में रहते हैं। इससे हमें शिक्षा लेनी चाहिए कि हम अपनी मौत को सदा याद रखेंगे। जो व्यक्ति मौत को याद रखता है, वह पाप, अत्याचार, अन्याय से युक्त गंदा जीवन नहीं जीता है। सुबह बिस्तर छोड़ने से पहले विचार करना चाहिए कि आज हमारा नया जन्म हुआ है। रात को मर जाना है, एक दिन का जीवन है तो इसे

गंदा, दोष दुर्गुण से भरा, व्यसनों और दुष्प्रवृत्तियों से युक्त क्यों जिएँ ? पूरे दिन इस पर ध्यान रखें कि शरीर से मन से कोई पाप तो नहीं हो रहा है। मन में गंदे विचार तो नहीं आ रहे हैं ? भावनाएँ तो गंदी नहीं हो रही हैं? ऐसा करने पर ही हम भगवान शंकर के भक्त कहलाएँगे।

रात को सोते समय विचार करना चाहिए कि अब हम मरने जा रहे हैं। दिन भर के कार्यों पर विचार करना चाहिए। ध्यान करना चाहिए कि हम आत्मस्वरूप में स्थित होकर शरीर को छोड़कर दूर बैठे हैं। हमारा मृत शरीर पड़ा है। इसे लोग श्मशान में ले गए और जला दिया। तीन मुट्ठी भस्म शेष बची। हमारा असली स्वरूप यह तीन मुट्ठी भस्म है। फिर इस शरीर से, मन से कोई पाप क्यों करें ? अच्छे कार्य ही क्यों न करें ताकि हमारा जीवन सफल हो जाए। अच्छे कर्म करेंगे तो आगे कम से कम मनुष्य योनि तो मिल ही जाएगी, अन्यथा तमाम निम्न योनियों में कष्ट भोगते हुए जीना पड़ेगा। मनुष्य शरीर मिला था। इससे हम अपना और कितनों का ही भला कर सकते थे। हजारों व्यक्तियों को दिशा दे सकते थे। यह विचार करते-करते सोना चाहिए। यही शंकर भगवान की पूजा है। इस पूजा से शंकर भगवान का आशीर्वाद अवश्य मिलेगा।

आजकल भगवान शंकर की पूजा का जो विधान है, उसमें भक्त भगवान शंकर पर जल चढ़ाता है। रोली, चावल, शक्कर, आक, धतूरा, बेल पत्र आदि चढ़ाता है। इससे भगवान शंकर का शरीर गंदा हो जाता है। धतूरे के काँटे और आक की दुर्गंध से भगवान शायद ही प्रसन्न होते होंगे। जरा आप अपने ऊपर इसे सोचें कि आपकी पूजा कोई इसी प्रकार करे तो आपकी क्या हालत होगी। आप ऐसे भक्त को मारने के लिए तैयार हो जाएँगे, जब हम ऐसी पूजा से प्रसन्न नहीं होते तो भगवान कैसे प्रसन्न हो सकते हैं और कैसे आपको आशीर्वाद दे सकते हैं? भगवान शंकर के ऊपर घड़े में पानी रख देते हैं। भगवान को चौबीस घंटे स्नान कराते रहते

हैं। यदि आपको कोई जाड़ों में निरंतर पानी की धार से स्नान कराता रहे तो आपकी क्या हालत होगी? जुकाम, खाँसी, बुखार हो जाएगा। भक्तों को चाहिए कि ऐसी उपासना बंद करें और शंकर भगवान के सिद्धांतों और आदर्शों को अपने व्यवहार में उतारें। आज जो भाई-बहिनों की शिकायत रहती है कि बरसों से शिव उपासना कर रहे हैं, पूजा कर रहे हैं, शिव चालीसा पढ़ रहे हैं लेकिन कोई लाभ नहीं मिला, उसके कारण को समझना चाहिए कि भगवान शंकर की असली पूजा तभी होगी जब हम उनके गुणों को अपने अंदर धारण करेंगे। अपने चिंतन, चरित्र और स्वभाव में परिवर्तन करेंगे। भगवान शंकर की उपासना से जब जगतगुरु शंकराचार्य को लाभ मिला तो हमें क्यों नहीं मिलेगा? भगवान का प्यार सबके लिए समान रूप से मिलना संभव है लेकिन उसके लिए अपनी पात्रता सिद्ध करना होती है। परमात्मा के अनुदान वरदान निरंतर बरस रहे हैं। जिसका पात्र जैसा होगा, उसको उतनी ही उपलब्धियाँ मिलती हैं। जिसका पात्र उल्टा होगा, जिसने धर्म के मार्ग को छोड़कर अधर्म का रास्ता अपनाया होगा, जो देव संस्कृति के सिद्धांत को उलटकर सही समझ रहा होगा, उसका पात्र खाली ही रहेगा। जो इन सिद्धांतों में आस्था रखेगा, उनके अनुसार अपने चिंतन, चरित्र और स्वभाव को विकसित करेगा, उसका पात्र अनुदानों से भरा-पूरा रहेगा।

हमने कहा पूज्यवर पात्रता की बात हमारी समझ में आ गई। कुछ लोग कहते है कि हमारे इष्ट भगवान शंकर हैं, कोई कहता है हमारा इष्ट हनुमान है और कोई अपना इष्ट कृष्ण को बताता है। यह इष्ट क्या होता है ? क्या एक व्यक्ति का इष्ट एक ही हो सकता है? एक व्यक्ति के एक से अधिक इष्ट नहीं हो सकते ?

■

इष्ट अर्थात जीवन लक्ष्य

पूज्यवर बोले—बेटा ! लोगों ने इष्ट का गलत अर्थ लगा लिया है। लोग यह देखते हैं कि हमारे घर में किस देवता की पूजा होती है। हमारे पिताजी-माताजी किस देवता की पूजा करते हैं अथवा कौन सा देवता लोगों की अधिक मनोकामनाएँ पूरी करता रहता है। उसी को हम अपना इष्ट बना लेते हैं। इन्हीं आधारों पर हम अपने इष्ट का निर्धारण करते हैं लेकिन ऐसा है नहीं। इष्ट का अर्थ है—लक्ष्य, उद्देश्य, मंजिल। हमारे जीवन का जो लक्ष्य है वही हमारा इष्ट है। हमें अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जिन गुणों की आवश्यकता हो, और वे गुण जिस देवता के हों उसी को अपना इष्ट बनाना चाहिए। वैसे तो सभी देवता सद्गुणों के भण्डार हैं लेकिन हमें यह देखना होता है कि हमें अपने जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति में किस देवता के गुण सहयोग कर सकते हैं। उस देवता की उपासना से वे सद्गुण हमारे अंदर आते चले जाएँगे और हमारा लक्ष्य सधता चला जाएगा। एक देवता की उपासना से उसके सद्गुणों को जब हम अपने स्वभाव में शामिल कर लें, तो किसी दूसरे देवता को इष्ट बनाकर उसकी उपासना करके उसके गुणों को अपने अंदर समाहित करने का प्रयास करें। अपने इष्ट की उपासना से उसके सद्गुणों को अपने स्वभाव का अंग बनाने का प्रयास करना पड़ता है और जब ऐसा हो जाता है तो उपासना सफल हो जाती है, मनुष्य देव तुल्य हो जाता है और जो उपलब्धियाँ उपासना से हो सकती हैं वह हमें भी मिल जाती हैं अर्थात देवत्व की प्राप्ति हो जाती है। इतना कहकर पूज्य गुरुदेव खड़े हो गए और बोले—आज की बात समाप्त। हमने कहा—गुरुदेव! आपने हमारी आँखें खोल दीं। हम तो बड़े भ्रम में भटक गए थे।

हम सोचने लगे कि पूज्य गुरुदेव का सान्निध्य हमें मिला यह परमात्मा की विशेष अनुकंपा ही है, वरना आजकल धर्माचार्य इन बातों को कहाँ बताते हैं। वे तो बस व्रत, उपवास, दान, तीर्थयात्रा, दर्शन, कथा सुनने की ही बात करते हैं। धर्म और अध्यात्म के वास्तविक स्वरूप को पूज्यवर ने हमारे सामने रखा तो हमारी आँखें खुलीं। हमने उसी दिन निश्चय कर लिया था कि अपना सारा जीवन धर्म और अध्यात्म के इस वास्तविक स्वरूप को जन-जन तक पहुँचाने में लगा देंगे। मन के परिष्कार (ब्रेन वाशिंग) का जो कार्य पूज्यवर ने किया, उसे इस मिशन की परंपरा बनाना ही हमारा लक्ष्य होना चाहिए। ऐसा चिंतन हमारा हमेशा रहा है। पहले हम अपने दिमाग को साफ करें। धर्म और परमात्मा के असली स्वरूप को समझें और फिर धर्म के विकृत स्वरूप की कीचड़ में फँसे व्यक्तियों का मानस परिष्कार कर उन्हें बाहर निकालें। आज के धर्माचार्यों का एकमात्र लक्ष्य यही होना चाहिए, परंतु अत्यंत खेद की बात यह है कि आजकल धर्माचार्य कथा सुनने की फलश्रुतियाँ समझाकर, तीर्थ यात्राओं में धक्के खाने की बात कहकर दान, स्तुति, स्तवन, प्रार्थना, परिक्रमा और प्रसाद चढ़ाने की फलश्रुतियाँ समझाकर जन मानस को विकृतियों से भर रहे हैं। जिस देश के सात लाख गाँवों में अस्सी लाख साधु महात्मा हों, वह देश चिंतन और चरित्र की दृष्टि से इतना पिछड़ा रहे, यह साधु संतों के लिए शर्म की बात है। यदि साधु संतों और ब्राह्मणों ने अपने कर्त्तव्य का पालन ईमानदारी के साथ किया होता, समाज को कर्मफल का सिद्धांत समझाया होता, तो यह देश पुनः धर्म के क्षेत्र में विश्वगुरु, संपदा के क्षेत्र में सोने की चिड़िया और राजनीति के क्षेत्र में चक्रवर्ती बन सकता था। आज समाज के पतन की पूरी जिम्मेदारी धर्माचार्यों पर आती है। समाज के पतन का कारण धर्माचार्यों का विकृत चिंतन है। यदि ईमानदारी से इस वर्ग ने अपनी जिम्मेदारी निभाई होती, तो जैसा समाज आज है वैसा नहीं हो सकता था। धर्माचार्यों को अपने बहुरूपियेपन को छोड़कर, अभिनय करना

छोड़कर, लोकेषणा का तिरस्कार कर अपने महान दायित्व को समझना चाहिए। प्राचीन परंपरा के अनुरूप सारा समाज साधु-वेश का सम्मान करता है, उनकी बातें ध्यान से सुनता है। समाज की इस कमजोरी का लाभ उठाकर वे अपनी जेबें भरते रहें, राजा महाराजाओं जैसा विलासिता पूर्ण जीवन जिएँ, इससे बड़ी दुष्टता और निकृष्टता हो नहीं सकती। काश! समाज से प्राप्त सम्मान का सदुपयोग उन्होंने जनमानस का परिष्कार करने और स्वस्थ चिंतन, सद्विवेक जाग्रत करने में किया होता तो राष्ट्र की परिस्थितियाँ बहुत सुखद होतीं और धर्माचार्यों को भी लोग अब से हजार गुना अधिक सम्मान देते। यदि धर्माचार्यों ने अपना रास्ता नहीं बदला तो आगे आने वाली विवेकवान पीढ़ी धर्म और अध्यात्म के नाम से घृणा करेगी। वह केवल उन्हीं तथ्यों पर विश्वास करेगी जो प्रामाणिक होंगे। अब धर्माचार्यों को भारतीय संस्कृति के सिद्धांतों की प्रामाणिकता सिद्ध करनी होगी। इतिहास के उदाहरणों के साथ-साथ वर्तमान के प्रमाण देकर यह सिद्ध करना होगा कि देव संस्कृति के इन सूत्रों को जीवन में उतारने पर कोई घाटे में नहीं रहता है। ये सिद्धांत निश्चित ही मनुष्य को उत्कृष्ट जीवन की ओर ले जाते हैं तथा भौतिक सुख और आत्मिक आनंद दोनों की प्राप्ति इनसे संभव है। यदि हम भौतिक सुखों से मुख मोड़ने की बात कहते रहे तो युवा पीढ़ी हमें सुनने को तैयार ही नहीं होगी। भौतिक साधनों का वास्तविक सुख आत्मोन्नति के साथ जुड़ा है। यह युवा पीढ़ी को समझाना होगा। प्रेम, दया, करुणा, सहानुभूति, सेवा, सहायता और समानता जैसे दैवीय गुणों से संपन्न व्यक्ति ही भौतिक सुखों को भोग सकेंगे अन्यथा ईर्ष्या, द्वेष, कटुता की दुष्प्रवृत्तियाँ भौतिक सुख भोगने वालों को कष्ट पहुँचाती रहेंगी। उनके सुखों में व्यवधान डालती रहेंगी अथवा सुखों का कभी भी अंत होने के भय से प्रताड़ित करती रहेंगी। प्रायः लोग देव स्थानों में अपने कष्ट-कठिनाइयों, समस्याओं का समाधान पाने के लिए मनौतियाँ मानने जाते हैं। विभिन्न स्थानों में जाली अथवा पेड़ों पर धागे बँधे होते हैं जो मनौतियाँ

मनाने वालों द्वारा बाँधे गए होते हैं। हमने निश्चय किया कि अब जब भी अवसर मिलेगा तो पूज्यवर से इसी संबंध में चर्चा करने की प्रार्थना करेंगे।

पूज्य गुरुदेव की सेवा का अवसर हम हमेशा तलाश करते रहते थे लेकिन पूज्यवर अपना सारा काम स्वयं ही करते रहते थे। हम यही सोचते कि कभी गुरुदेव हमें एक गिलास पानी पिलाने का आदेश दे दें तो हमारा जीवन धन्य हो जाए। क्षेत्र में एक बार पूज्य गुरुदेव को ज्वर हो गया। गुरुदेव खाना नहीं खा रहे थे, यह सोचकर हमने एक गिलास मौसम्मी का रस निकालकर गुरुदेव के सामने कर दिया। गुरुदेव ने पानी समझकर जैसे ही एक घूँट पिया तो समझ गए कि यह जूस है। मुझ पर बहुत बिगड़े, कहने लगे—मुझे जूस पिलाएगा। मेरे यहाँ मेरे बच्चे अच्छी-अच्छी नौकरियाँ छोड़कर आए हैं, उन्हें मैं रूखी-सूखी रोटियाँ खिलाता हूँ और तू मुझे मौसमी का जूस पिलाएगा। पूज्य गुरुदेव ने गले में उँगली डालकर रस वापस निकाल दिया। हमने मन ही मन उस महान गुरु सत्ता को प्रणाम किया। बुखार की स्थिति में भी पूज्यवर ने प्रवचन किया। प्रवचन में हम उनके सामने बैठे बड़े ध्यान से उनकी अमृत वाणी का रसपान कर रहे थे। न मालूम पूज्यवर को यह कैसे मालूम हो गया, और वे आज प्रवचन में हमारी ही समस्या का समाधान करने लगे।

पूज्यवर ने बताया कि भगवान माँगने वालों को देता तो है लेकिन पात्रता को देख लेता है। ईश्वर का कर्मफल का सिद्धांत अटल है। अच्छे कर्मों का फल लाभ के रूप में और बुरे कर्मों का फल हानि के रूप में देता है। आज की जो भी परिस्थितियाँ हैं, वे यकायक ही उत्पन्न नहीं हो गई हैं, वे सब पूर्व में किए गए प्रयत्नों का ही परिणाम हैं। ईश्वर दयालु भी है और न्यायी भी । कोई भी व्यक्ति दयालु और न्यायी एक साथ कैसे हो सकता है ? ईश्वर न्याय करता है यही उसकी महान दयालुता है। ईश्वर का एक नाम नियम भी है। ईश्वर सब कुछ करने के लिए स्वतंत्र नहीं है, वह नियमों में बँधा है। वह न्यायाधीश है। किसी भी न्यायाधीश को यह छूट नहीं है कि वह

कुछ भी दंड दे दे। ईश्वर दयालु इस दृष्टि से है कि जब वह देखता है, कोई प्राणी अपने दुष्कर्मों के दंड स्वरूप दुःख भोग रहा है और उसने इसे भलीभाँति समझकर मन ही मन प्रायश्चित कर लिया है, अपना रास्ता दुष्कर्मों से सत्कर्मों की ओर मोड़ लिया है तो वह दयालु होने के कारण उस पर कृपा दृष्टि फेरता है और उसके दंड को कम कर देता है। दूसरा एक व्यक्ति अपने पूर्व सत्कर्मों के पुरस्कार स्वरूप सुख भोग रहा है लेकिन भौतिक सुखों के मद में वह ईश्वर के न्याय को भूल जाता है और दुष्कर्मों की ओर मुड़ जाता है तो ईश्वर उसके सत्कर्मों के पुरस्कार को कम करके भौतिक साधनों की प्रचुरता होते हुए भी उसे कष्टमय जीवन व्यतीत करने को विवश करता है। ऐसा करके ईश्वर अपने न्यायशील स्वरूप का आभास कराने का प्रयास करता है ताकि मनुष्य यह समझ सके कि ईश्वर न्यायी के साथ दयालु और कठोर भी है। सत्कर्मी के साथ दया और दुष्कर्मी के साथ कठोरता, यह ईश्वर का स्वभाव है, यही उसकी व्यवस्था है।

आगे पूज्यवर ने एक उदाहरण देकर समझाया कि एक व्यक्ति एक संत के पास आया और बोला कि प्रभु मैंने आज मंदिर में देखा कि एक सज्जन व्यक्ति मंदिर में आया तो उसे बड़े जोर से ठोकर लगी और उसके पैर में चोट लग गई। थोड़ी देर में एक दुष्ट व्यक्ति वहाँ आया और उसे मंदिर में दस हजार के नोटों का बंडल मिल गया। उसे लेकर वह प्रसन्नता के साथ चला गया। यह ईश्वर का कैसा न्याय है? संत ने उत्तर दिया कि बेटा ! जिस सज्जन व्यक्ति की बात तुम कर रहे हो, उसके पूर्व कर्म तो इतने खराब थे कि उसका पैर ही कट जाना चाहिए था लेकिन उसने अपना रास्ता बदलकर सत्कर्मों की ओर लगा दिया है, इसलिए उसका दंड केवल ठोकर से पूरा हो गया। जिस दुष्ट व्यक्ति की बात तुम कर रहे हो उस व्यक्ति के कर्म तो ऐसे थे कि उसे किसी राज्य का स्वामी होना चाहिए था लेकिन दुष्कर्मों की ओर प्रवृत्त होने के कारण उसे दस हजार रुपयों में ही संतोष करना पड़ा। ◻

ईश्वरीय सत्ता की न्याय व्यवस्था

पूज्य गुरुदेव ने हमारे मन में उपजी शंका स्वयं प्रश्न के रूप में रखी। कहने लगे—"कुछ लोग पूछ सकते हैं कि ईश्वर का न्याय बहुत विलंब से क्यों होता है? यदि चोरी करने वाले का हाथ तुरंत कट गया होता तो लोग चोरी करना ही छोड़ देते। कुदृष्टि डालने वाले की आँखें तुरंत अंधी हो गयी होतीं तो लोग कुदृष्टि डालना छोड़ गए होते। झूठ बोलते ही यदि व्यक्ति गूँगा हो गया होता तो लोग झूठ बोलना छोड़ गए होते। ईश्वर के न्याय में इतना विलंब हो जाता है कि कभी के किए हुए कर्म का फल कभी मिलता है। इससे ईश्वर के न्यायी होने में शंका हो जाती है। समाधान करते हुए पूज्यवर बोले—समाज की सुव्यवस्था बनाने के लिए समस्त मर्यादाएँ मनुष्य पर ही लगाई गई हैं। मनुष्य परमेश्वर का राजकुमार है, युवराज है, अतः उसकी गरिमा को बनाए रखने के लिए उसे सुधरने, सँवरने का अवसर ईश्वर बार-बार प्रदान करता है। दुष्कर्मों से बचने और सत्कर्मों की ओर प्रेरित होने के लिए उसने मनुष्य को बुद्धि-विवेक भी दिया है। जब ईश्वर ने इतनी विशेषताएँ और अनुदान मनुष्य को प्रदान किए हैं तो वह उससे यह आशा भी रखता है कि वह उन अनुदानों का उपयोग कर दुष्कर्मों के परिणामों को समझें और उनसे बचें। दुष्कर्मों का दंड तुरंत देने से ईश्वर की महान दयालुता पर कलंक लगता है। ईश्वर सद्गुणों का समुच्चय है, अतः दयालुता के सदगुण से ही वह वंचित क्यों रहे? इसी कारण मनुष्य को पुनः-पुनः सँभलने का अवसर प्रदान कर उसने अपनी दयालुता का ही परिचय दिया है।"

"कोई यह चाहे कि हम परमात्मा के लिए कुछ न करें, परमात्मा ही हमारे लिए सब कुछ करता रहे, यह संभव नहीं है।

परमात्मा अपने युवराज मनुष्य को कृतघ्न नहीं कृतज्ञ बनाना चाहता है। जब परमात्मा ने कृपा करके हमें मनुष्य जन्म दिया है तो हमें भी परमात्मा के युवराज होने के कारण उसकी मर्यादा और गरिमा को अक्षुण्ण बनाए रखने में अपनी सारी प्रतिभा और योग्यता लगा देनी चाहिए। भगवान किसी को कुछ देने से पहले यह देखता है कि इसने मेरे लिए क्या दिया है? जिसने भगवान के लिए कुछ नहीं दिया, भगवान उसे कुछ भी नहीं दे सकता है, चाहे वह उसका मित्र, सखा, पिता अथवा माता ही क्यों न हो। गरीब हो या अमीर यह नियम सब पर लागू होता है। सुदामा कृष्ण के मित्र थे। महाराज श्रीकृष्ण से सहायता माँगने के लिए जब द्वारका पहुँचे तो कृष्ण ने पहले उससे चावल की पोटली ले ली तभी उसे तमाम संपदा का स्वामी बनाया। पहले भगवान को देना होता है तभी उससे कुछ प्राप्त होता है। कौरवों की सभा में द्रौपदी की साड़ी खींची जा रही थी तो उसने शील की रक्षा हेतु आर्त्त स्वर में भगवान को पुकारा। भगवान ने पहले उसके कर्मों का खाता खेला, देखा कि क्या इसने भी कभी मर्यादा की रक्षा के लिए कपड़ा दिया है? एक बार एक संत नदी में स्नान कर रहे थे। उनका एकमात्र वस्त्र नदी में बह गया। लज्जावश वे पानी से बाहर नहीं आ रहे थे। द्रौपदी वहाँ पहुँची तो देखा, संत बहुत देर से नदी में खड़े हैं, बाहर नहीं निकल रहे हैं। उसने पूछा तो उन्होंने कारण बता दिया। द्रौपदी ने तुरंत अपनी साड़ी का एक भाग फाड़कर दिया था और इस प्रकार मर्यादा की रक्षा की थी। एक बार कृष्ण की अँगुली में चोट आने पर भी द्रौपदी ने साड़ी की चीर फाड़कर अँगुली पर लपेट दी थी। उसके दिए हुए यह थोड़े से वस्त्र भगवान के बैंक में द्रौपदी के खाते में जमा रहे, जो ब्याज सहित इतने हो गए कि दुःशासन खींचते-खींचते हार गया लेकिन साड़ी समाप्त नहीं हुई। द्रौपदी ने संत की मर्यादा की रक्षा की तो उसकी भी मर्यादा की रक्षा हुई। द्रौपदी ने अंगुली की पीड़ा को समझा तो भगवान ने उसकी भी पीड़ा का हरण किया।"

पूज्य गुरुदेव की ये बातें सुनकर हमें याद आया कि एक बार गुरुदेव ने कहा था कि गायत्री माता ने प्रसन्न होकर हमसे कहा था कि बेटा! मैं तेरी साधना से बहुत प्रसन्न हूँ, माँग क्या माँगता है? हमने कहा कि माँ हमको तो आपने स्वयं ही सब कुछ दे रखा है, आप हमें आज्ञा करिए कि हम आपको क्या दें? हमें आप देने का सौभाग्य प्रदान करेंगी तो हम अपने आपको धन्य समझेंगे। निश्चय ही माँ का प्यार और उसके अनुदान-वरदान उसी को मिलते हैं जो माँ को देना जानता है। जो माँ से सदा माँगता ही रहे, उसे माँ निखट्टू कपूत समझती है।

हमने उसी दिन समझ लिया था कि माँ से कुछ माँगना है तो बस यही कि हे माँ! हमें सद्बुद्धि देना ताकि हम सत्कर्मों की ओर प्रेरित होते रहें। हमने गुरुदेव से पूछा—गुरुदेव! क्या हम गायत्री माता से भोजन, धन, मकान, संपत्ति नहीं माँगें? पूज्यवर बोले—जो माँ तुम्हें प्रेम, दया, करुणा, सहानुभूति, सहृदयता के रूप में अनेक दैवीय गुणों की संपदा का भंडार प्रदान कर सकती है, उससे भोजन, वस्त्र, धन जैसी तुच्छ वस्तुएँ माँगकर निकृष्ट भिखारी क्यों बनता है? श्रम, पुरुषार्थ, योग्यता और लगन के गुण जिस व्यक्ति में होंगे, वह स्वयं ही यह सब कमा सकता है। इसके लिए भगवान से याचना करना मनुष्य की गरिमा के विरुद्ध है और फिर यह सब मनुष्य की मूल आवश्यकताएँ इतनी कम हैं कि इन योग्यताओं के होते आठ घंटे काम करने वाला मनुष्य इनकी पूर्ति आसानी से कर सकता है। आवश्यकताएँ तो सबकी पूरी हो जाती हैं पर इच्छाएँ किसी की भी समाप्त नहीं होती।

□

राम और कृष्ण का अनुग्रह दर्शन

शिविरों की व्यवस्था, प्रकाशन और भवन निर्माण की व्यवस्था में व्यस्त रहने के कारण पूज्यवर से सत्संग का लाभ मिले कई दिन निकल गए। एक शिविर का समापन हुआ, विदाई हो गई। दूसरा शिविर प्रारंभ होने में कुछ दिन शेष थे, अतः अवकाश मिला। पूज्यवर मंदिर के सामने पत्थर पर बैठे थे। हम उनके चरणों में प्रणाम कर नीचे बैठ गए। बोले—पूज्यवर बहुत समय पहले आपसे हनुमान और शंकर भगवान की उपासना का तत्त्व-दर्शन सुना था। हमारी जिज्ञासा है कि हम भगवान राम और कृष्ण की उपासना का तत्त्व दर्शन सुनना चाहते हैं। कृपा करके हमें बताएँ कि भगवान राम और कृष्ण की सच्ची उपासना कैसे की जानी चाहिए?

पूज्य गुरुदेव हमारी बात पर हँसे और बोले—तुम्हें कड़वी बातें सुनने का बड़ा शौक लगा है। जिन बातों को भक्तगण सुनना नहीं चाहते तुम मुझसे वही कहलाना पसंद करते हो लेकिन सचाई तो सचाई है, कड़वी हो या मीठी। जब नीम की कड़वी पत्ती चबाने से मुँह कड़वा हो जाता है तो खारा पानी भी मीठा लगने लगता है, जिसने भी कड़वी बातों को पचा लिया उसको फिर जीवन भर मिठास आती रहती है।

गुरुदेव बोले—बेटा! भगवान राम हमारे आदर्श हैं मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। उन्होंने अपने जीवन में किसी समस्या का समाधान किस ढंग से किया, यह हम उनसे सीख सकते हैं। भगवान राम का जन्म किस कारण हुआ? तुलसीदास जी लिखते हैं—

"असुर मार थापहिं सुरन्ह, राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग विस्तारहिं विषद यश, राम जनम कर हेतु॥"

राम का जन्म असुरता के विनाश के लिए ही हुआ है। असुरता के विरुद्ध संघर्ष ही राम का आदर्श है। इस आदर्श को अपने जीवन में उतारना ही उनकी उपासना है। भगवान राम जीवन भर असुरों से लड़ते रहे। ताड़का, सुबाहु, मारीचि नाम के राक्षस यज्ञों में विघ्न डालते थे, भगवान राम ने उन्हें मारा। रावण विलासिता और अहंकार का प्रचार करता था, उसको मारा। कुंभकरण आलस का प्रचार करता था, उसको मारा। सूपर्णखाँ फैशन परस्ती का प्रचार कर दूसरों का चरित्र भ्रष्ट करती थी, उसका दर्प दूर किया। भगवान राम के इन लीला चरित्रों से हमें शिक्षा लेनी चाहिए। आज जो असुरता समाज में फैली है उससे लड़ना चाहिए। नशेबाजी, फैशन परस्ती, आलस्य, असंयम, जाति–पाँति, दहेज का राक्षस किस प्रकार समाज को खाए जा रहा है। नशेबाजी किस प्रकार सबके स्वास्थ्य, धन एवं प्रतिष्ठा को चौपट किए जा रही है। इनसे लड़ना ही भगवान राम की सच्ची उपासना है। भगवान राम के आदर्शों पर चलकर उनके कार्यों को पूरा करने वाला ही भगवान राम का सच्चा भक्त है। भगवान राम की मूर्ति पर धूप, दीप, पुष्प, प्रसाद चढ़ाने वाले पर भगवान राम प्रसन्न नहीं होंगे। वे इसे भलीभाँति समझते हैं कि यह तथाकथित भक्त हमारा भक्त नहीं चापलूस है जो हमें भोला नादान समझकर ठगने आया है। प्रिय भक्तो! भगवान इतना सस्ता नहीं कि सवा रुपया का प्रसाद खाकर, फूल माला पहन कर, अगरबत्ती की सुगंध से प्रसन्न हो जाय और आपकी मनोकामना पूर्ण कर दे।

भगवान राम के भक्तों को यह भलीभाँति समझ लेना चाहिए कि समाज में व्याप्त असुरता को रोकने के लिए ईश्वर ने सामूहिक जिम्मेदारी हर व्यक्ति को सौंपी है। उनका कर्त्तव्य है कि अनीति जहाँ कहीं भी हो रही है उसे रोकें, हटाने का प्रयत्न करें,विरोध करें, असहयोग बरतें। जो भी तरीका अनुकूल जँचे उसे अपनाएँ। कमजोर से कमजोर व्यक्ति को इतना तो करना ही चाहिए कि

अनीति में अपना सहयोग प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी भी रूप में न दे। बुरे कामों की प्रशंसा तो कदापि न की जाय, उनके प्रति भर्त्सना, घृणा और विरोध की भावना तो अवश्य ही रखी जाय। यदि हम ऐसा करेंगे तो भगवान राम के भक्त कहला सकेंगे। खेद की बात है कि आजकल ऐसे भक्तों का अकाल पड़ा है। आजकल भक्तगण दनादन रामायण का पाठ करने में लगे हैं। रात भर माइक पर चिल्लाते हैं। न खुद सोते हैं, न दूसरों को सोने देते हैं। अखंड कीर्तन करते हैं। हमने एक अखंड कीर्तन देखा उसमें भक्तगण बड़े मस्त होकर नाच रहे थे। बाजे बजा रहे थे, शरीर को तोड़-मरोड़ रहे थे। हमने उनको श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया तो हमारे साथ खड़े मित्र बोले—किसको प्रणाम कर रहे हो? हमने कहा—इन झूम-झूमकर कीर्तन करने वाले भक्तों को। वे बोले—इन सबने शराब पी रखी है। नशे में नाच रहे हैं। नशा उतरने पर इन्हें न राम से कोई मतलब रहेगा और न कीर्तन से।

आज यदि भगवान के थोड़े से भी सच्चे भक्त होते तो असुरता समाज में कैसे रह सकती थी? देश में लगभग ८० लाख साधु भजन, पूजन, कीर्तन, तीर्थयात्रा करते, बीड़ी, सिगरेट, तंबाकू, भाँग, गांजा, चरस की दम लगाते समाज पर भार बने हुए हैं। समाज में फैली असुरता से लड़ने को तैयार नहीं हैं। मगर राम के भक्त कहलाते हैं। ऐसे भक्तों से देश का कोई हित नहीं होने वाला। ये सब साधु जो सारे दिन माला घुमाते हैं, मारे-मारे फिरते हैं, इन ८० लाख साधुओं का पाँच रुपया प्रति व्यक्ति ही प्रतिदिन का खरच लगाएँ तो प्रतिदिन चार करोड़ का खरच हो जाता हे, महीने की १२० करोड़, और वर्ष का १४४० करोड़। खरबों रुपया धर्म के नाम पर खरच हो रहा है। भारत के सब साधुओं का खरच और सब मंदिरों का खरच का हिसाब लगाएँ तो धनराशि देश के वार्षिक बजट के लगभग पहुँचेगी। जिस धनराशि से पूरे देश का खरच चल

सकता था वह धनराशि धर्म के नाम पर व्यर्थ बरबाद की जा रही है। समाज के ऊपर कितना बड़ा बोझ है, इसे सभी को समझना चाहिए।

धन की बात छोड़ भी दें, अगर ये धर्माचार्य एकता और संगठन की शक्ति से समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने में अपनी प्रतिभा और सम्मान का सदुपयोग करते, दुष्प्रवृत्तियों से जन-जन को मुक्ति दिलाते, परिवारों को कलह और विघटन से बचाते, अगर ये धर्माचार्य धर्म के सच्चे मर्म को जानकर सही रास्ते पर चलते, समाज की सेवा को ही ईश्वर की सेवा समझते तो क्या देश में नशेबाजी रह सकती थी, दहेज का दानव बहिन-बेटियों को निगल सकता था, धूमधाम की शादियों में धन की बरबादी हो सकती थी। जातिवाद, प्रांतवाद, भाषावाद, नारी का अपमान, जनसंख्या वृद्धि की समस्याएँ समाज में रह सकती थीं? हमारा दावा है कि आज भी यदि धर्म तंत्र से जुड़े लोग लोकैषणा, वित्तैषणा और अहं को छोड़कर संगठित प्रयास करें तो देखते-देखते समाज बदलता चला जाएगा। ८० लाख की साधु-सेना यदि इस काम पर जुट पड़े तो समाज में स्वर्गीय परिस्थितियाँ उत्पन्न करना बिलकुल भी कठिन काम नहीं है लेकिन तथाकथित धर्माचार्य स्वयं भ्रम में पड़े हुए हैं और दूसरों को धर्म के नाम पर भ्रम में डालते रहते हैं। कहते हैं कथा सुनो, भागवत सुनो, भजन करो, गंगा स्नान करो, तीर्थयात्रा करो और स्वर्ग का टिकट ले जाओ। इन क्रियाओं को स्वर्ग का रास्ता सीधा बतला दिया गया है। धर्म का रास्ता इतना आसान नहीं है। अपने दोष दुर्गुणों को छोड़ना पड़ता है, पवित्र जीवन जीना पड़ता हे,समाज की सेवा करनी पड़ती है, धर्म-मार्ग यह हैं।

आजकल जिसे लोग धर्म की संज्ञा दे रहे है, वह धर्म नहीं है। मरे हुए धर्म की लाश ढोई जा रही है। जीवंत धर्म का स्वरूप सबको समझाना होगा तभी देश ऊँचा उठ सकता है और घरों में

स्वर्ग आ सकता है। धर्म कोई जादूगरी या बाजीगरी नहीं है। थोड़े से भोग और फूल माला से देवता प्रसन्न हो जाते हैं, धर्म के नाम पर यह जो भ्रम है उसे दूर करना चाहिए। रामायण घर-घर पढ़ी जाती है, क्योंकि यह समझा दिया गया कि रामायण का पाठ करने से भगवान प्रसन्न हो जाते हैं और मनोकामनाएँ पूर्ण कर देते हैं। काश! रामायण के आदर्श पात्रों के चरित्र के कुछ सूत्र भी हमने अपने जीवन में उतारे होते तो हमारे परिवार स्वर्ग हो जाते। राम सहित चारों भाई बड़ों का चरण स्पर्श करते थे। सीता माता सासुओं के चरण छूती थीं। राम ने भरत के लिए राजगद्दी छोड़कर वनवास स्वीकार किया। उधर भरत ने राजगद्दी न लेने का निश्चय किया और राम से राजगद्दी सँभालने का आग्रह किया। राम और भरत के बीच सहर्ष राजगद्दी को फुटबॉल बना दिया गया। कहाँ गए वे आदर्श, कहाँ गए वे लोग इस देश को छोड़कर। क्या भारत माता ने ऐसे महामानवों को जन्म देना बंद कर दिया है?

बहुत पहले एक चीनी यात्री जब इस देश में आया तो उसने यात्रा संस्मरण में लिखा कि उसने भारत के एक गाँव में जो लड़ाई देखी वह अन्य किसी देश में देखने को नहीं मिल सकती है। एक गरीब व्यक्ति ने गरीबी से तंग आकर अपना खंडहर मकान एक सेठ को बेच दिया। सेठ ने उसे तुड़वाकर दुबारा नया बनवाने का काम प्रारंभ कराया तो उसमें बहुत सा गढ़ा धन निकला। सेठ वह धन लेकर मकान के पहले मालिक के पास पहुँचा और बोला यह धन आपका है इसे आप लीजिए। उस व्यक्ति ने कहा कि मैंने वह मकान आपको बेच दिया उसमें कुछ भी निकले वह सब आपका ही है, आप ही इसे रखिए। मेरा होता तो मुझे पहले ही मिल जाता और मुझे मकान क्यों बेचना पड़ता? इसी बात पर दोनों में झगड़ा हो रहा था। चीनी यात्री ने लिखा है कि ऐसी ईमानदारी भारत के अलावा अन्यन्त्र कहीं शायद देखने को नहीं मिल सकती। ऐसे संस्कारवान लोग जो कभी इस देश में

रहते थे, आज कहाँ चले गए। भगवान राम की कथा का केवल पाठ करने का कोई फल होता है, इससे सभी धर्माचार्यों को स्पष्ट इंकार कर देना चाहिए और जन-जन में रामायण के चरित्रों को अपने स्वभाव का अंग बनाने की प्रेरणा भरनी चाहिए। यदि ऐसा किया गया तो यह देश फिर से धर्म के क्षेत्र में विश्वगुरु का स्थान पा सकेगा।

शबरी जैसी प्रतिभा और योग्यता से हीन महिला भी सेवा और सहृदयता के गुणों से संपन्न होने के कारण भगवान राम के सान्निध्य और कृपा की अधिकारी बनी। नदी स्नान को जाने वाले ऋषियों और विद्यार्थियों के पैर में काँटे लगते थे, अतः नित्य प्रति प्रातः उठकर रास्ता साफ करती थी। समाज की सेवा ही सच्चा धर्म है जिसे शबरी ने अपनाकर भगवान का आशीर्वाद प्राप्त किया। आजकल हम लोग भजन-पूजन तो खूब कर लेते हैं लेकिन जब सेवा की बात आती है तो मुँह मोड़ लेते हैं। समाज की सेवा ही भगवान राम की सच्ची सेवा है।

बूढ़ा जटायु पेड़ पर बैठा था। आकाश में देखा, रावण सीता माता का अपहरण करके ले जा रहा था। सीता माता रोती चिल्लाती जा रही थीं। जटायु ने रावण को ललकारा, बोला—तू कितना ही बलवान सही लेकिन मेरे जीते जी तू किसी की बहिन-बेटी को इस तरह नहीं ले जा सकता। समाज की बहिन-बेटी मेरी बहिन-बेटी है। जटायु ने रावण पर हमला कर दिया। जटायु जानता था कि मैं रावण से जीत नहीं सकता, परंतु उसने हिम्मत की, वह रावण से लड़ा। युद्ध में घायल होकर गिर पड़ा। जमीन पर पड़ा कराह रहा था। सीता माता को ढूँढ़ते हुए भगवान राम आए तब उन्होंने जटायु को देखा, उसे अपनी गोद में रखा और आँसुओं से स्नान कराया। धर्म के शाश्वत सिद्धांतों के प्रति जटायु की कितनी गहरी निष्ठा थी। उसने अपने प्राणों की बलि देकर भी उसकी रक्षा की, तो क्या वह घाटे में रहा? जटायु को भगवान के दर्शन

मिले, गोद मिली, प्यार मिला, भगवान राम के हाथों से उसका दाह-संस्कार हुआ। यह सौभाग्य तो भगवान राम के पिता दशरथ को भी नहीं मिला, जो जटायु को मिला। यूँ तो संसार में कितने ही गिद्ध पैदा होते रहे हैं लेकिन जटायु का नाम इतिहास में प्रसिद्ध है। रामायण में उसके सौभाग्य को सभी सराहते हैं। उसके त्याग बलिदान की यशोगाथा जब तक सूरज चाँद रहेगा, गाई जाती रहेगी। राष्ट्र, धर्म, संस्कृति के प्रति हमें निष्ठावान होना चाहिए, यह शिक्षा हमें रामकथा से मिलती है। हम रामायण का पाठ तो करते हैं लेकिन उसके सिद्धांतों और आदर्शों के प्रति उदासीन बने रहते हैं। यह हमारी दुर्बुद्धि ही है। धर्म का अर्थ दर्शन करना, प्रसाद चढ़ाना, भजन और कथा सुनना नहीं है। धर्म का अर्थ है—कर्त्तव्यपरायणता। अपने प्रति, परिवार के प्रति, समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वों को निभाना ही धर्म है। रामायण के आदर्श पात्रों ने अपने-अपने धर्म का पालन करके उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। इस मिशन का मुख्य उद्देश्य यही है कि धर्म के नाम पर जो भ्रम फैला है, धर्म में जो विकृतियाँ आ गई हैं, उनको दूर करना है। आज धर्म के नाम पर जो अरबों-खरबों रुपया बरबाद किया जा रहा है और धर्मांध समाज इस खर्च को वहन किए जा रहा है, समाज को उससे तनिक भी लाभ होने वाला नहीं है। प्रति वर्ष देश भर में हजारों स्थानों पर रामलीलाए होती हैं। एक प्रसिद्ध शहर की रामलीला में राम की बारात और जनकपुरी की सजावट में डेढ़ करोड़ रुपया खरच हुआ। काश! राम के आदर्श अपनाने के लिए सौ व्यक्ति भी इतने पैसे से तैयार हो जाते तो हमें संतोष हो जाता।

पूज्य गुरुदेव के कष्ट को हमने अपने हृदय में अनुभव किया और निश्चय किया कि हम पूज्यवर के उन विचारों को परिजनों तक अवश्य पहुँचाएँगे। हमारे जो भाई-बहिन धर्म के रास्ते पर चलना चाहते हैं, उनसे अनुरोध करेंगे कि प्रत्येक भाई-बहिन को

दो घंटे का समय समाज सेवा के लिए लगाना ही चाहिए। आज मंदिर, धर्मशाला और भोजन (लंगर-भंडारा) के अभाव में समाज नहीं मर रहा है, आज समाज सद्‌विचारों और सद्‌भावनाओं के अभाव में मर रहा है। समाज की सबसे बड़ी सेवा विचारों की सेवा है। पूज्य गुरुदेव के इन क्रांतिकारी, प्रभावशाली विचारों को घर-घर पहुँचाना ही आज का युग धर्म है। श्रीराम झोला पुस्तकालय और ज्ञानरथ के माध्यम से जन-जन तक यह साहित्य पहुँचाना चाहिए। प्रत्येक घर में ज्ञान मंदिर की स्थापना कराना चाहिए ताकि प्रत्येक परिवार में स्वाध्याय परंपरा चल पड़े, साहित्य के माध्यम से लोगों का दुश्चिंतन मिटे, सद्‌विचार स्थान पाएँ, आदर्शों और सिद्धांतों को क्रियात्मक स्वरूप प्राप्त हो। सिद्धांत केवल चर्चा के और कथा वार्ता के विषय ही बनकर न रह जाएँ। सिद्धांतों को व्यावहारिक जीवन में अपनाने की प्रेरणा मिले, साहस और मनोबल मिले, यह आज की आवश्यकता है।

पूज्य गुरुदेव के श्रीमुख से भगवान राम के आदर्शों एवं उपासना की व्याख्या सुनकर हमारा हृदय उत्साह, उमंग और साहस से भर गया। जिज्ञासा और बढ़ गई। अगले ही दिन पूज्य गुरुदेव को एकांत में बैठे देख प्रणाम कर नीचे बैठ गए। बोले—गुरुदेव! कल आपने भगवान राम की उपासना बतलाई हमारी आँखें खुल गईं। आज कृपा करके भगवान कृष्ण की उपासना बतलाएँ तो हमारे मानस की अन्य गुत्थियाँ भी सुलझ जाएँ।

पूज्य गुरुदेव मुस्कराए और बोले—बेटा! भगवान कृष्ण ने अपने सिद्धांतों को स्वयं अपने श्रीमुख से गीता में वर्णित किया है। भगवान कृष्ण के अवतार का उद्‌देश्य धर्म की स्थापना और अधर्म का नाश करना ही था। हमने पूछा—गुरुदेव! धर्म की स्थापना से क्या मतलब है? आज तो धर्म के नाम से लोग चिढ़ते हैं। संप्रदायों को ही धर्म मानते हैं। देश में धर्म के नाम पर कितने झगड़े हो रहे हैं। एक धर्म के अनुयायी दूसरों को गालियाँ दे रहे हैं। भगवान

कृष्ण किस धर्म की स्थापना की बात कहते हैं और आपकी हमारे लिए किस धर्म का प्रचार करने की आज्ञा है?

पूज्य गुरुदेव बोले—यह सब धर्म नहीं है। वे लोग अज्ञान फैला रहे हैं। धर्म के नाम पर अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं। मानव जाति का एक ही धर्म है। मानव मात्र का धर्म है अपने कर्त्तव्यों का, दायित्वों का निर्वाह पूरी ईमानदारी, निष्ठा और लगन से करे। मनुष्य की प्रत्येक इंद्रिय का अपना धर्म है उसे अपने धर्म का पालन करना चाहिए। आँख का धर्म है, समस्त प्राणियों में ईश्वर का दर्शन करे, प्रत्येक स्त्री को बहिन, बेटी और माँ की दृष्टि से देखे। आँख का धर्म शिवाजी ने निभाया था। जब सरदारों ने यवन कन्या को शिवाजी के सामने लाकर खड़ा किया तो शिवाजी उसकी सुंदरता को देखते ही रह गए। जब सरदारों ने पूछा कि आप क्या देख रहे हैं तो शिवाजी ने कहा—काश! मेरी माँ इतनी खूबसूरत होती तो मैं भी इस कन्या जैसा सुंदर होता। शिवाजी ने उस कन्या में अपनी माँ का दर्शन किया। यह था आँख का धर्म जो शिवाजी ने निभाया।

कान का धर्म है महापुरुषों की अमृत वाणी सुनना, दूसरों की अच्छाइयाँ सुनना। मुख का धर्म है सत्य और प्रिय बोलना, अभक्ष्य, मांस, मदिरा, तंबाकू न खाना। हाथों का धर्म है सत्कर्म करना और सेवा धर्म को अपनाना।

मानव मात्र का धर्म है कि सभी धर्मों से बढ़कर युग धर्म अर्थात समय धर्म को समझें और उसका पालन करने में बिलकुल पीछे न रहें। आज युग का धर्म है-समाज को दुश्चिंतन और दुर्भावनाओं की अग्नि से बचाना। सद्विचारों और सद्भावनाओं की सेना द्वारा समाज की रक्षा करना। आज का युग धर्म है छोटा परिवार, वृक्षारोपण, पर्यावरण संरक्षण और जीव हत्या रोकना।

प्रत्येक मनुष्य का धर्म है कि अपने प्रति, परिवार के प्रति, समाज और राष्ट्र के प्रति अपने कर्त्तव्यों को पूरा करे। इसी धर्म

की बात भगवान कृष्ण कहते हैं। युग धर्म के रूप में अर्जुन को युद्ध करने की प्रेरणा देते हैं। भगवान कहते हैं कि तू लड़, जब तक सौ कौरवों को नहीं मारेगा, तेरा उद्धार नहीं होगा। अर्जुन कहता है कि मैं इनसे लड़ना नहीं चाहता, ये मेरे रिश्तेदार हैं, इनसे कैसे लड़ूँ? कौरव माने सौ बुराइयाँ,पांडव माने पाँच अच्छाइयाँ। कौरव माने सौ कुविचार, पांडव माने पाँच सद्विचार। सौ कौरवों के लिए पाँच पांडव काफी हैं लेकिन इनका युद्ध होना आवश्यक है। जब तक पांडव इन कौरवों से नहीं लड़ेंगे, तब तक मानव मात्र को शांति नहीं मिल सकती। हर व्यक्ति आज दोष दुर्गुणों से परेशान है। कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि इन बुराइयों से लड़े बिना तेरा उद्धार नहीं हो सकता। चाहे जितनी माला घुमाता रह, यज्ञ, जप, तीर्थ करता रह, ये बुराइयाँ तुझको चैन नहीं लेने देंगीं।

अर्जुन ने कहा कि इन बुराइयों से कैसे लड़ूँ? बीड़ी, सिगरेट, तंबाकू, शराब मेरे रिश्तेदार हैं, इनके बिना मुझे चैन नहीं पड़ता। जब तक मैं बेईमानी, झूठ, मिलावट, रिश्वतखोरी नहीं करता, मांस नहीं खाता तब तक मुझे संतोष नहीं होता। ये सब मेरे अंग अवयव बन गए हैं। इनसे कैसे लडूं? भगवान ने कहा कि अगर तू इनसे नहीं लड़ेगा तो नरक में जाएगा और यदि लड़ेगा तो इन्हें मारकर राज्य का सुख भोगेगा। अर्जुन—बोला मैं नरक में चला जाऊँगा, मुझे राज्य नहीं चाहिए, मैं तो भीख माँगकर पेट भर लूँगा लेकिन इन बुराइयों से नहीं लड़ सकता क्योंकि ये मेरी रिश्तेदार हैं।

इतना सुनकर भी भगवान कृष्ण जैसा सुधारक, व्यक्तित्व निर्माणकर्त्ता निराश नहीं हुआ। भगवान ने जब देखा कि सीधी अँगुली से घी नहीं निकल रहा है तो उन्होंने अगला मार्ग भर्त्सना का अपनाया और अर्जुन को खरी-खोटी सुनाने लगे। बोले— होगा तू वीर, होगा तू धनुर्धारी, तू अपने मन में स्वयं को कितना ही बड़ा योद्धा समझतारह, लेकिन तेरे जैसा कायर, तेरे जैसा

नपुंसक व्यक्ति तो इस संसार में कोई दूसरा नहीं है। अरे, असली वीर तो वह है जो अपने दोषदुर्गुणों पर विजय पा सके। असली धनुर्धारी तो वह है जो मनोबल, आत्मबल, सद्‌चिंतन और सद्‌भावनाओं के बाणों का प्रहार कर अपने अंदर समाये हुए दोषदुर्गुण कषाय-कल्मष जैसे असुरों का संहार कर सके, सामाजिक कुरीतियों और दुष्प्रवृत्तियों जैसी राक्षसियों का संहार कर सके।

पूज्य गुरुदेव बोले—बेटा! अर्जुन माने अस्थिर, डावाँडोल प्रकृति का मनुष्य। आज हर व्यक्ति अर्जुन ही दिखाई देता है। दोष दुर्गुणों से परेशान भी है, छोड़ना भी चाहता है लेकिन अर्जुन की भाँति इन रिश्तेदारों से लड़ना नहीं चाहता। हमारे मिशन का उद्‌देश्य ऐसे लड़खड़ाते, अस्थिर बुद्धि वाले, डावाँडोल चिंतन वाले अर्जुनों को सही मार्ग पर लाना ही है। इसलिए हमने प्रथम अखण्ड ज्योति के प्रथम पृष्ठ पर सुदर्शन चक्रधारी कृष्ण का चित्र दिया था। भगवान कृष्ण का सुदर्शन चक्र अर्थात अच्छे विचार, ऊँचे सिद्धांतों का चक्र। हमने अपने मिशन को सुदर्शन चक्र बनाया है, जो श्रेष्ठ विचारों के माध्यम से कुविचारों की गर्दन काटने के काम आता है।

भगवान कृष्ण के प्रत्येक भक्त को चाहिए कि यदि वह भगवान कृष्ण की सच्ची उपासना करना चाहता है तो भगवान कृष्ण का मार्ग अपनाए। सद्‌मार्ग से भटके अर्जुनों को पहले प्यार से अध्यात्म का मार्ग समझाए फिर उन्हें युग धर्म का निर्वाह करने के लिए तैयार करे, अपने दोष दुर्गुणों को छोड़ने के लिए तैयार करे। जब यह मार्ग असफल हो जाए तो नरक का भय, कष्ट कठिनाइयों का भय दिखाकर तैयार करें, जब यह मार्ग भी असफल हो जाए तो दोष दुर्गुणों से संघर्ष करने और विजय पाने पर प्राप्त उपलब्धियों का लालच दिखाकर तैयार करे और जब यह मार्ग भी असफल हो जाए तो भर्त्सना कर उसे संघर्ष के लिए तैयार करे। इतने मार्ग तो भगवान कृष्ण ने सज्जनों के

साथ अपनाने के लिए बताए हैं। इन मार्गों के माध्यम से सत्पुरुषों का पौरुष जग ही जाता है और वे दोष दुर्गुणों से लड़ने और विजय पाने को तत्पर हो जाते हैं तथा कुरीतियों, कुप्रथाओं को दूर करने के लिए संघर्ष करने लगते हैं, जैसे अर्जुन तैयार हो गया, लेकिन दुर्योधन जैसे दुष्ट दुराचारियों के लिए उक्त सारे मार्ग असफल हो जाते हैं, तब भगवान कृष्ण को महाभारत के युद्ध की घोषणा करनी ही पड़ती है। यद्यपि यह अंतिम शस्त्र है, जो विवशतावश उठाया जाता है, लेकिन जब आवश्यक ही हो जाए तो उससे पीछे हटना भी कायरता है। इससे होने वाली जन-धन की हानि की तुलना में सिद्धांतों की स्थापना अधिक उपयुक्त ही प्रतीत होती है।

बेटा! धर्म कायरों कमजोरों, बुजदिलों की जागीर नहीं है। यह तो वीरों, योद्धाओं और साहसियों की धरोहर है। अब समय आ गया है कि सामाजिक और व्यक्तिगत बुराइयों से लड़ा जाए। यदि मृत्यु के भय से मोह वश नहीं लड़ा गया तो विश्व का सर्वनाश ही हो जाएगा। जब सारा संसार जल रहा हो तो भी क्या आप सोते ही रहेंगे? ऐसी निष्ठुरता किस काम की। ऐसी स्थिति में प्रत्येक भाई-बहिन को कुछ समय नित्य निकालकर सद्विचारों को साहित्य के माध्यम से घर-घर पहुँचाना ही चाहिए। मैं एक व्यक्ति नहीं विचार हूँ। मेरा सच्चा शिष्य वह है जो मेरे विचारों को साहित्य के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाता रहे। जो मेरे विचारों की ओर ध्यान नहीं देता मात्र यज्ञ करता है और गायत्री जपता है। उसको मैं अपना प्रिय शिष्य नहीं मानता। मेरा आशीर्वाद और गायत्री माँ की कृपा भी उन पर ही बरसती है जो सद्विचारों को फैलाते हैं, क्योंकि गायत्री का अर्थ है—सद्विचार सद्विचारों को फैलाना ही गायत्री माता की सच्ची सेवा है, यही गायत्री का प्रचार है। मैंने अपने बेटों से क्या-क्या आशाएँ लगाई थीं लेकिन मेरे बेटे अहंकार की पूर्ति में व्यर्थ में समय बर्बाद कर रहे हैं, विलासी जीवन जी रहे हैं। यदि मेरे विचारों को साहित्य के माध्यम से सारे विश्व में फैला

दिया होता तो मिशन सौ साल आगे चल गया होता। मेरे प्रिय बच्चो! रावण मरने ही वाला है। गोवर्धन उठने ही वाला है। तुम लोगों को श्रेय लेना है। बस, मेरे विचारों को फैला दो। मैं सारी समस्याओं को हल कर रहा हूँ। यदि गायत्री परिवार के परिजन अपने अहं की पूर्ति में ही लगे रहे तो मैं दूसरों से अपना कार्य करा लूँगा, और जो श्रेय उन्हें मिलने को था वह दूसरों को मिल जाएगा। अपनी भूल को सुधार लो।

हमने कहा—गुरुदेव ! आपने भगवान कृष्ण की उपासना का जो मर्म हमको आज समझाया है, यह तो हमने पहली बार ही सुना है। हम स्वयं को कृष्ण का भक्त समझते हैं। प्रायः मथुरा वृंदावन के मंदिरों में भगवान कृष्ण के दर्शन बड़ी श्रद्धा के साथ करने जाते हैं। भगवान कृष्ण की सुंदर मनमोहक बाँकी छ्टा का दर्शन कर हम स्वयं को भगवान कृष्ण का भक्त समझते हैं, तो क्या भगवान कृष्ण की मूर्ति के दर्शन करने का कोई औचित्य नहीं है? इतनी भीड़ भगवान के दर्शनों के लिए आती है, क्या यह सब बेकार ही आते हैं?

पूज्य गुरुदेव बहुत हँसे फिर बोले—यह भीड़ तो वास्तव में बेकार ही आ रही है। इन सबके मस्तिष्क में एक ही बात प्रवेश करा दी गई है कि मंदिर में भगवान के दर्शनों का बड़ा पुण्य होता है। उससे हमारी मनोकामना पूर्ण हो जाती है। हमारा जीवन धन्य हो जाता है। मंदिर जाकर लोग अपने अहं की तुष्टि करते हैं। मंदिर जाकर आए हैं इसे बड़े गर्व के साथ बताते हैं। प्रसाद पाने के लिए और दर्शन पास से करने के लिए सिफारिश लगाते हैं। जहाँ सबके लिए प्रवेश वर्जित हो, वहाँ जाकर दर्शन किए, इसे दूसरों को गर्व के साथ बताते हैं। अनुशासन को धता बताकर, शारीरिक बल से सबको धकेलते हुए दर्शन करेंगे, दर्शन करते समय जोर-जोर से न जाने क्या-क्या बोलेंगे, घंटा बजाएँगे, बार-बार कान पकड़ेंगे, हाथ जोड़ेंगे। दिन भर के पापों के लिए क्षमा माँगेंगे और अगले दिन पुनः पाप कर्मों में लिप्त होने की अनुमति प्राप्त कर लेंगे।

पूज्यवर थोड़ा ठहरकर पुनः बोले—दर्शन का अर्थ है—फिलॉसफी, सिद्धांत, चिंतन। हम जिस देवता के मंदिर में जाएँ उस देवता की मूर्ति के सम्मुख खड़े हों। उस देवता के दर्शन अर्थात सिद्धांतों या उनकी प्रेरणाओं का चिंतन करें। उन प्रेरणाओं को अपने व्यावहारिक जीवन में उतारने की शक्ति देवता से माँगे। देवता के एक-एक श्रृंगार से प्रेरणा प्राप्त करें। ये पत्थर के देवता ऋषियों ने अपने अंदर सोए देवता को जगाने के लिए बनाए हैं। सच्चा देवता तो हमारे अंदर ही है। मूर्ति तो सच्चे देवता का मॉडल है—नमूना है। इस मॉडल की सहायता से ही हम अंदर के देवता को जगाने में सफल होते हैं। अभ्यास करते-करते जब अंदर का देवता जग जाता है तो इस बाहर के देवता की आवश्यकता ही नहीं होती, लेकिन हम देखते हैं लोग जीवन भर देवता की मूर्ति के दर्शन करते रहे और अपने अंदर के देवता को नहीं जगा सके। उसका कारण यही रहा कि उन्होंने उस प्रतिमा को ही देवता समझ लिया। उस देवता की फिलॉसफी को नहीं समझा। दर्शन का अर्थ मात्र देखना समझा। मंदिर में शोर, शराबा, अनुशासनहीनता, चिंतन की प्रक्रिया में व्यवधान डालती है। मंदिर में शांति होना, एकाग्रता और चिंतन के लिए अति आवश्यक है। यदि मंदिर में जाकर भी अनुशासन नहीं सीखा तो समाज में अनुशासन कैसे रहेगा? मंदिर संजीवनी साधना अर्थात जीवन जीने की कला के केंद्र होते हैं, जन जागरण के केंद्र होते हैं। मंदिरों में ज्ञान यज्ञ के माध्यम से आगंतुकों को सद्ज्ञान, सद्कर्म का प्रशिक्षण मिलना चाहिए। मंदिरों में जाकर लोग समाज सेवा की प्रेरणा ग्रहण करें, तब ही मंदिर और दर्शन की उपयोगिता है।

दुःख तो इस बात का है कि आजकल प्रायः मंदिर व्यापारिक प्रतिष्ठान बन गए हैं। जहाँ दुकान बनाई जानी चाहिए वहाँ मंदिर खोले जा रहे हैं, ताकि ग्राहकों को आने में आकर्षण रहे। जिस बेरोजगार व्यक्ति को कोई और काम न मिले वह संकट मोचन,

दुःख हरण, कष्ट निवारण हनुमान का मंदिर अथवा मनोकामनेश्वर, चिंताहरण, कष्ट हरण महादेव का मंदिर खोल ले तो उसका गुजारा आसानी से चल सकता है। एक प्लाट पर कई लोग उसका मालिक बनने के लिए झगड़ा टंटा करते रहते थे। एक दमदार व्यक्ति ने जबरन उस स्थान पर महादेव जी का मंदिर बनवा दिया और नाम रख दिया टंटेश्वर महादेव। किसी स्थान पर नाजायज जबरन कब्जा करना हो, महादेव जी अथवा हनुमान जी का मंदिर बनवा दो, फिर उसे हटाने की हिम्मत न प्रशासन में है,न किसी राज नेता में। मैं तुम्हें यह बता रहा हूँ कि मंदिरों के प्रति जन श्रद्धा का किस प्रकार दुरुपयोग किया जा रहा है।

हमने कहा—गुरुदेव! मंदिरों का महत्त्व और मूर्ति के दर्शन का महत्त्व हमारी समझ में आ गया। आपने हमें अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने का जो उपकार किया है, उसे हम जीवन भर भुला नहीं सकेंगे। आपने हमें जो सच्चे ज्ञान का प्रकाश दिया है, उसके लिए हम आपके आजीवन आभारी रहेंगे। यदि आपके संपर्क में हम न आए होते तो हमारा जीवन यों ही निरर्थक चला गया होता। हमें लग रहा है कि हमने आपकी शरण में आने में विलंब कर दिया। पहले आ गए होते तो कितना अच्छा होता।

पूज्य गुरुदेव बोले—बेटा! तू आने को तैयार कहाँ हो रहा था? तुझे तो मिल की मैनेजरी और यूनियन के अध्यक्ष पद का बड़ा घमंड था न। तुझे कारों में घूमना, कोठियों में रहना, नौकर, फोन और सब सुख-सुविधाओं का आनंद आ रहा था। अब समझ में आ रहा है कि उस भौतिकवादी सुख से कहीं ज्यादा आनंद इस आध्यात्मिक जीवन में है। भौतिक साधनों का सुख भी तभी सच्चा सुख पहुँचाता है, जब हमारा दृष्टिकोण आध्यात्मिक हो। परिष्कृत जीवन में ही भौतिक सुख आनंद प्रदान करते हैं अन्यथा धन, संपत्ति आदि सुख-सुविधाएँ भार प्रतीत होने लगती हैं।

□

काश! दुर्गा जग सके

आज पूज्यवर हमारे कुछ पूछने से पहले ही स्वयं कुछ कहने को तैयार बैठे थे। हम प्रणाम करके आसन पर बैठे ही थे कि गुरुदेव बोले—तुमने कई देवी-देवताओं की उपासना, साधना के विषय में पूछा, लेकिन तुम्हें मालूम है कि इक्कीसवीं सदी नारी प्रधान होगी। महर्षि अरविंद ने इसे **मदर सैंचुरी** कहा है। इस सदी में नारियों का वर्चस्व बढ़ेगा। विश्व कासंचालन नारियों के हाथ में होगा। ईश्वर ने पुरुषों को विश्व की बागडोर थमाकर हजारों सालों में देख लिया है कि पुरुष अपनी कठोरता, निष्ठुरता और बर्बरता की प्रवृत्ति के कारण विश्व वसुंधरा को सुशोभित करने में असफल ही सिद्ध हुआ है। महाकाल अब नारियों की मृदुता, ममता, दया, शालीनता और कोमलता को युग संचालन का कार्य भार सौंपने का मन बना चुके हैं। अतः इस सदी में देव शक्तियाँ भी नारी का रूप धारण करेंगी। इक्कीसवीं सदी की पूर्व वेला में ही तुम देख रहे हो कि गायत्री, दुर्गा, संतोषी माता आदि कितनी ही देव शक्तियाँ नारियों के रूप में जनमानस में स्थान पा रही हैं। आज हम तुम्हें वर्तमान में सर्वाधिक प्रचलित दुर्गा माता की पूजा का तत्त्वदर्शन बताना चाहते हैं।

आज सबको दुर्गा शक्ति के तत्वदर्शन को समझना ही चाहिए। विश्व को अब दुर्गाशक्ति की सर्वाधिक आवश्यकता है। दुर्गा **संघशक्ति** का प्रतीक है। पुराणों में जो वर्णन आता है उसके अनुसार एक समय शुंभ-निशुंभ, महिषासुर आदि असुरों के अत्याचारों से पृथ्वी पर धर्म की जड़ें हिलने लगीं थीं। ये मांसाहारी, मदिरा पीने वाले, व्यभिचारी, लुटेरे और हत्यारे असुर जब देव पुरुषों को नाना प्रकार के दुःख देने लगे तो देवताओं ने ब्रह्माजी की सलाह पर अपनी बिखरी हुई शक्तियों को संचित किया। दैवीय शक्तियों की वह संगठित शक्ति दुर्गा, काली,

चंडी अथवा अंबिका नामों से प्रसिद्ध हुई। उसने असुरों को मारा और दैवीय तत्त्वों की रक्षा की तभी से देवी की पूजा होने लगी। परमात्मा की शक्तियों ने संगठित होकर दुर्गा के रूप में अवतरित होकर संसार को यह शिक्षा दी कि हम देव स्वभाव के व्यक्ति यदि अधर्मी असुरों के मुकाबले में अपनी सज्जनता और धर्म धारणा के कारण कमजोर पड़ते हैं तो संगठित होकर अपनी संगठन की शक्ति का उपयोग करें। इससे वे निश्चय ही बड़े से बड़े असुरों को भूमिसात कर सकते हैं। आज इसी दुर्गा शक्ति के जागरण की आवश्यकता है। सारे देश में घर-घर, गली-गली, मोहल्ले-मोहल्ले में दुर्गा जागरण संपन्न कराए जा रहे हैं। काश! इनसे दुर्गा शक्ति का जागरण हो सका होता। दुर्गा माता ने अवतरित होकर महिषासुर, मधुकैटभ और शुंभ-निशुंभ आदि असुरों का संहार किया था। महिषासुर अर्थात आलस्य। मधुकैटभ अर्थात असंयम। शुंभ-निशुंभ अर्थात लोभ-मोह। दुर्गा का अर्थ है— अनीति अत्याचार के विरुद्ध संगठित होकर संघर्ष करना। यदि दुर्गा माता के भक्तों ने अपने अंदर दुर्गा माता को अर्थात आत्म शक्ति को जगाकर व्यक्तिगत जीवन में इन असुर कुत्साओं का दमन किया होता, लौकिक जगत में अज्ञान, अन्याय और अभाव के रूप में व्याप्त इन तीन असुरों को परास्त किया होता तो भक्तों की दुर्गा पूजा और दुर्गा जागरण सार्थक हो जाता। हम दुर्गा पूजा और दुर्गा जागरण के नाम पर क्या कर रहे हैं यह तो सब जानते ही हैं। रात-रात भर तेज ध्वनि वाले लाउडस्पीकर लगाकर, सिनेमा के गीतों की तर्ज पर चापलूसी खुशामद भरे और अपनी दीनता-हीनता प्रदर्शित करने वाले गीतों को नाच-नाच कर गाया जा रहा है। लगता है कि दुर्गा माता चापलूसी से प्रसन्न होने वाली हैं। हमने दुर्गा माता को अपना नौकर समझ रखा है जो हमारी सब मनोकामनाओं को पूरा करे, क्योंकि हमने उसको नारियल चढ़ा दिया, पैसा चढ़ा दिया और रात्रि भर जागकर खूब भजन गाए हैं। जागरण का अर्थ नींद खराब करना नहीं है। **जागरण का अर्थ है अपने अंदर दुर्गा शक्ति का जागरण। अनीति, अत्याचार,**

कुरीतियों, रूढ़ियों और दुष्प्रवृत्तियों के विरुद्ध संघर्ष हेतु आत्म शक्ति का जागरण। दुर्गा जागरण हेतु हम सज्जनों और देव आत्माओं को एकत्र करें। संसार में व्याप्त अनीति, अत्याचारों से व्यथित मानवता, दुष्प्रवृत्तियों, रूढ़ियों एवं कुरीतियों से सताई मानसिकता एवं अज्ञान अंधकार से ग्रसित मानव जाति के कष्टों की चर्चा की जाए। इनसे समाज को मुक्त कराने हेतु संगठित होकर प्रयास करने का संकल्प लिया जाए। कायरों की भाँति जीने की अपेक्षा वीरों की भाँति मरना अच्छा है। जहाँ धर्म हमें दया, सज्जनता, सहिष्णुता, स्नेह की शिक्षा देता है वहीं दुर्गा माता अवतरित होकर आसुरी शक्तियों का संहार करने के लिए हमें संगठन की शक्ति द्वारा अनीति अत्याचारों के विरुद्ध संघर्ष की शिक्षा भी देती हैं।

मानव जब स्वार्थ में अंधा होकर नर पशु की तरह, नर पिशाच की तरह आचरण करने लगता है तो उसे सुधारना हर कीमत पर आवश्यक हो जाता है। लोकमानस को संतुलित रखने के लिए जन साधारण को नीति और धर्म की मर्यादा में रखने वाले मार्गदर्शक देवदूत भेजे जाते हैं। जब तक उनके प्रयासों से काम बनता रहता है तब तक परमात्मा कठोरता नहीं बरतते, पर जब स्थिति बेकाबू हो जाती है और सीधी अँगुली से घी नहीं निकलता तो अँगुली टेढ़ी करने का प्रयोजन पूर्ण करना होता है तब उन्हें उचित शिक्षा देने के लिए भयानक, लोमहर्षक, निर्दय और निर्मम उपाय काम में लाए जाते हैं। जिनमें दसों दिशाओं में हा-हाकार मच जाता है और अवांछनीय, अनुपयुक्त और अशुभ सब कुछ जलकर नष्ट हो जाता है। इस विप्लव में गेहूँ के साथ घुन भी पिसता है। जो निर्दोष दीखते हैं वे भी चपेट में आ जाते हैं, पर वे वस्तुतः निर्दोष दीखते ही हैं होते नहीं। अपराध करना एक पाप है, पर उसे रोकने के लिए प्रयत्न न करना निरपराध होने का चिन्ह नहीं है। अपने काम से काम, अपने मतलब से मतलब रखने की नीति यों भोलीभाली मालूम पड़ती है, पर वास्तव में बड़ी ही संकीर्ण, ओछी

और असामाजिक है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है, उसकी प्रगति, शांति और सुरक्षा सामाजिक सुव्यवस्था पर निर्भर है। कोई विचारशील व्यक्ति यदि अपने पिछड़े और बिगड़े समाज को सुधारने के लिए कोई प्रयत्न नहीं करता तो भगवान की दंड संहिता में अनीति की उपेक्षा करना दंडनीय अपराध ही माना जाता है। सफलता और उन्नति के विषय में मनुष्य झूमता रहता है। उसका अहंकार और स्वार्थ सुधारने और संघर्ष का प्रयत्न करने से विलग करता है तो इस विपन्नता को महाकाल की रुद्रता ही दूर करती है। महाकाल के डंडे की चोंटे खाकर उसे अपनी भूल खोजने और सुधरने की याद आती है। भूले हुए को रास्ते पर लाने का यह तरीका है तो निर्मम लेकिन उसकी अमोघ शक्ति का लोहा मानना पड़ता है। महाकाल इन दिनों यही सब करने जा रहे हैं।

पूज्यवर यह कहकर शांत हो गए तो हमें अपनी जिज्ञासा रखने का अवसर मिला। हमने पूछा—गुरुदेव! यह महाकाल कौन है? और महाकाली भगवान शंकर की छाती पर नृत्य करती है इसका क्या तात्पर्य है?

पूज्यवर मुस्कराए और बोले—यह सब चित्र और मूर्तियाँ ईश्वरीय नियमों की आलंकारिक व्याख्या करने हेतु बनाई गई हैं। **महाकाल का अर्थ है समय की सीमा से परे एक ऐसी अदृश्य प्रचंड सत्ता जो सृष्टि का संचालन करती है, दंड व्यवस्था का निर्धारण करती है एवं जहाँ कहीं भी अराजकता, अनुशासनहीनता दृष्टिगोचर होती है वहाँ सुव्यवस्था हेतु अपना सुदर्शन चक्र चलाती है।** जब संसार की जराजीर्ण और अवांछनीय परिस्थियों के सामान्य सुधार के प्रयत्न सफल नहीं हुए तो महाकाल ने तांडव नृत्य किया जिसमें अनुपयुक्त कूड़ा-करकट जलकर भस्म होने लगा। बड़े-बड़े महल गिराना तो आसान है पर उनका बनाना बहुत कठिन होता है। इसलिए ध्वंस से अधिक महत्त्व निर्माण का है। महाकाल के नृत्य से जब ध्वंस हो चुका तो महाकाल का कार्य समाप्त हो गया और फिर सृजन

की देवी महाकाली आगे आईं। उसने महाकाल से उनका तांडव बंद कराया। उन्हें भूमि पर लिटा दिया अर्थात धराशायी कर दिया और स्वयं आगे बढ़कर सृजन के कार्यों में संलग्न हो गईं। पुराणों में इसी चिंतन को चित्रित किया गया है जिसमें महाकाल भूमि पर लेटे हुए हैं और महाकाली उनकी छाती पर खड़ी अट्टाहास कर रही है। यों पति की छाती पर पत्नी का खड़ा होना अटपटा सा लगता है लेकिन पहेलियों में यह अटपटापन मनोरंजक भी है और ज्ञानवर्धक भी। कबीर की उलटवासी और खुसरो की मुकरनी पहेलियों के रूप में लिखी गई हैं और अपना रहस्य जानने के लिए बुद्धिमत्ता को चुनौती देती हैं। भूमि पर लेटे हुए शिव की छाती पर काली का खड़े होकर अट्टहास करना, घटना के रूप में वास्तव में घटित हुआ या नहीं इस झंझट में हमें नहीं पड़ना चाहिए। हमें उसमें सन्निहित धर्म और तत्त्व को समझने का प्रयास करना चाहिए।

ध्वंस एक आपत्ति धर्म है और सृजन एक सनातन प्रक्रिया। ध्वंस को अंततः रुक ही जाना पड़ता है और थककर लेट जाना और अंत में सो जाना पड़ता है। ऐसी स्थिति में सृजन को दोहरा काम करना पड़ता है। एक तो स्वाभाविक रचनात्मक प्रक्रिया का संचालन और दूसरे ध्वंस के कारण हुई क्षति की पूर्ति का आयोजन। इस दोहरी उपयोगिता के कारण ध्वंस के देवता महाकाल की अपेक्षा सृजन की देवी महाकाली का महत्त्व बहुत अधिक बढ़ जाता है। महाकाल जब पड़े होते हैं तब शक्ति खड़ी होती है। शिव पीछे पड़ जाते हैं और शक्ति आगे आती है। शिव सोए होते हैं, तो शक्ति जाग्रत रहती है। शिव का महत्त्व घट जाता है और शक्ति की गतिशीलता पूजी जाती है। महाकाल की छाती पर खड़े होकर महाकाली का अट्टहास इसी तथ्य का अलंकारिक चित्रण है।

भगवान शिव के हाथ में त्रिशूल अवश्य है वे उसका अनिवार्य परिस्थितियों में प्रयोग भी करते हैं लेकिन उनके हृदय में सृजन की असीम करुणा ही भरी रहती है, क्योंकि सृजन की देवी काली

उनकी हृदयेश्वरी है। वे उसे सदा अपने हृदय में स्थान दिए रहते हैं। आवश्यकता पड़ने पर वह मूर्तिमान गतिशील और प्रखर हो उठती है। ध्वंस के अवसर पर तो उसकी आवश्यकता और भी अधिक हो जाती है। ऑपरेशन के समय डॉक्टर को चाकू, कैंची, आरी, सुई आदि तेज धार वाले शस्त्रों की भी जरूरत पड़ती है और उससे भी अधिक सामग्री मरहम पट्टी की जुटानी पड़ती है। ऑपरेशन के समय जो घाव हो जाता है उसको भरने की आवश्यकता डॉक्टर अच्छी तरह समझते हैं और इसीलिए वे रूई, गौज, मरहम, दवाएँ आदि भी बड़ी मात्रा में पास रख लेते हैं। ध्वंस की प्रक्रिया ऑपरेशन है तो निर्माण मरहम पट्टी है। भगवान को ध्वंस तो करना पड़ता है लेकिन मूल में आकांक्षा सृजन की ही रहती है। क्रूर कर्म में भी अंतःकरण में अनंत करुणा छिपी रहती है। महाकाल की आंतरिक इच्छा तो सृजन की ही है। शक्ति को शिव के हृदय के स्थान पर इस प्रकार दिखाया गया है मानो वह हृदय में से ही निकलकर मूर्तिमान हो रही हो।

यहाँ भी देखने की बात है कि विनाश के बाद होने वाले पुनर्निर्माण में मातृशक्ति का ही हाथ प्रमुख रहता है। जब पिता बच्चे को प्रताड़ित करता है तो बच्चा माँ के पास ही दौड़कर जाता है और वही उसे अपने आँचल में छिपाती, छाती से लगाती, पुचकारती और दुलारती है। मात्र शक्ति करुणा की स्रोत है। इसीलिए अस्पतालों में नर्स का कार्य, बाल मंदिरों और शिशु सदनों में शिक्षण का कार्य पुरुषों की अपेक्षा महिलाएँ ज्यादा अच्छी तरह से करती हैं, क्योंकि महिलाओं के अंदर करुणा, दया, ममता, सेवा, सौजन्य और सहृदयता का बाहुल्य रहता है। पुरुष प्राकृतिक रूप से कठोर है और नारी कोमल। शिव की छाती पर शक्ति के खड़े होने का एक तात्पर्य यह भी है कि आत्मिक श्रेष्ठता की कसौटी पर कसे जाने पर नारी की गरिमा ही भारी बैठती है वही ऊपर रहती है। पुरुष इस दृष्टि से गिरा हुआ सिद्ध होता है। जबकि नारी अपनी श्रेष्ठता को प्रमाणित करती हुई प्रसन्न वदन खड़ी होती है।

समर्पण की साधना और सिद्धि

हमें याद आया कि पूज्य गुरुदेव जब ग्वालियर हमारे पास आते थे और हमारे पास दो तीन दिन रहते थे, तब हमसे हमेशा यही कहा करते थे कि तू इस कार्य को छोड़ दे और हमारे पास आ जा। तू आ जाएगा तो हम और तू एक और एक ग्यारह हो जाएँगे, और फिर देखना मिशन कितनी तेजी से कार्य करता है। हम हमेशा यही कहते कि गुरुदेव मुझे आपके विचार तो अच्छे लगते हैं लेकिन ये भौतिक सुख-साधन छोड़ने का मन नहीं बनता है। पूजा तो हम यहाँ भी रोज कर लेते हैं। भगवान को फूल चढ़ा देते हैं, चंदन लगा देते हैं, धूप-दीप जला देते हैं, इतना ही ठीक है बस।

पूज्य गुरुदेव बोले—बेटा! फूल चढ़ाना क्या इतना आसान समझ रखा है। फूल भगवान के चरणों में चढ़ना चाहता है तो पहले उसे अपना गला कटाना पड़ता है। गला कटाने का अर्थ है, मस्तिष्क में घुसे कुविचारों को काटना पड़ता है। आँख, नाक, कान, जिह्वा आदि ज्ञानेंद्रियों को संयमित करना पड़ता है। जब हम स्वयं पुष्प बनकर भगवान के चरणों में चढ़ने की पात्रता प्राप्त करते हैं। इसे स्मरण रखने के लिए ही पुष्प को भगवान के चरणों में चढ़ाया जाता है। साथ ही यह भी भावना रखनी होती है कि हम फूल जैसा हँसता-हँसाता, प्रफुल्लता भरा जीवन जिएँगे। अपने जीवन की समस्त खुशियाँ भगवान के चरणों में समर्पित करेंगे। भगवान भी क्या उसे अपने पास रखते हैं? नहीं उसे सैकड़ों गुना बढ़ाकर हमारे जीवन को और आनंदमय बना देते हैं। फूल चरणों में चढ़ने की योग्यता तभी प्राप्त करता है जब वह उसके लिए तैयार हो जाय कि उसकी गर्दन से होकर सुई घुसे और सिर से निकल जाय। स्वयं

को जातीय विजातीय पुष्पों के साथ धागे में पिरोकर अपना अकेले पुष्प का अस्तित्व मिटा दे ताकि माला का अस्तित्व प्रकट हो जाए, तो फिर वह भगवान के गले का हार बनने का सौभाग्य प्राप्त कर लेता है। ये सब उपलब्धियाँ ऐसे ही नहीं मिल जातीं। पुष्प चढ़ाना तो आसान है लेकिन पुष्प का दर्शन समझकर पुष्प चढ़ाने पर ही कुछ लाभ हो सकता है।

हम समझ रहे थे कि पूज्यवर हमें क्यों समझा रहे हैं। वे हमें भौतिकवादी जीवन से विमुख करने का प्रयास कर रहे थे लेकिन भौतिक सुखों का मोह इतनी जल्दी कहाँ छूटता है।

गुरुदेव बोले—पूजा में चंदन लगाने का अर्थ यह है कि हम अपने मस्तिष्क में शीतलता रखें, आवेश व क्रोध से बचें। कुविचारों को मस्तिष्क में प्रवेश न करने दें। चंदन का वृक्ष जहाँ होता है, आस-पास के वृक्षों में भी सुगंध पैदा कर देता है। हम जहाँ भी रहें, स्वयं श्रेष्ठ बनें और दूसरों को अपने जैसा श्रेष्ठ बनाने का प्रयास करें। 'चंदन विष व्यापत नहीं, लिपटे रहत भुजंग' चाहे कितने ही दुष्टों के साथ रहना पड़े लेकिन उनका कोई प्रभाव हमारे ऊपर नहीं पड़ना चाहिए। हमारा प्रभाव ही उन पर पड़े। चंदन लगाने का यही उद्‌देश्य है।

धूप से हम वातावरण को सुगंधित बनाते हैं। सुगंधित वातावरण ही परमात्मा को प्रिय है। ईमानदारी, परिश्रम और पसीने की कमाई से उत्पन्न सुगंध परमात्मा को अच्छी लगती है। दीपक ज्ञान का प्रतीक है। हम स्वयं ज्ञान प्राप्त करें और दूसरों तक ज्ञान पहुँचाएँ, यह शिक्षण दीपक दे रहा है। हमने परमात्मा का ज्ञान स्वाध्याय द्वारा प्राप्त किया है अथवा चिंतन द्वारा या गायत्री माता की कृपा से ब्रह्मांड से प्राप्त किया है, उसे पुस्तकों के रूप में लिख रहे हैं। ज्ञान तो भगवान का है, इसे पका कर सुपाच्य बनाने का काम हमने कर दिया है। अब संसार के सारे भाई-बहिनों तक इसे पहुँचा देने की जिम्मेदारी उठाने वाले अंग अवयवों की मुझे आवश्यकता आ पड़ी है। अब मैं तलाश में हूँ कि इसके लिए उपयुक्त पात्र व्यक्ति मुझ मिल जाएँ तो मेरा कार्य

पूर्ण हो जाए। यह जिम्मेदारी किन कंधों पर डालूँ, यही चिंतन इन दिनों चल रहा है। ज्ञानयज्ञ की लाल मशाल को थाम सकने वाले मजबूत हाथों की आवश्यकता है।

पूज्यवर का पहला इंजैक्शन पुष्प की व्याख्या सुनते समय लगा और दूसरा इंजैक्शन दीपक की व्याख्या सुनते हुए। पहले इंजैक्शन के प्रभाव को तो हम हजम कर गए, लेकिन इस इंजैक्शन का प्रभाव तीखा हुआ। हमने गुरुदेव से पूछा कि गुरुदेव! आपको आपकी आवश्यकता के अनुकूल व्यक्ति कोई नहीं मिला? पूज्यवर दुखी होकर बोले—मिला तो सही, लेकिन मोह-ममता और भौतिक सुखों में लिप्त होने के कारण समर्पण करने को तैयार नहीं है। हम समझ रहे थे कि यह हमारे लिए कहा जा रहा है इसलिए हम तुरंत चुप हो गए।

पूज्य गुरुदेव धीरे-धीरे संजीवनी बूटी पिला रहे थे। हमारे चुप होने से उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। आगे बोले—पूजा में श्रद्धा का जल भी चढ़ाया जाता है, अटूट निष्ठा के अक्षत भी चढ़ाए जाते हैं। भगवान शंकर पर तो जल की अविरल धारा अर्थात कल्याणकारी तत्त्वों पर अटूट श्रद्धा रखनी होती है। संसार के कल्याणकारी तत्त्वों पर निरंतर अटूट श्रद्धा रखना ही शिवलिंग पर जलधारा चढ़ाने का दर्शन है। चावल (अक्षत) अर्थात जो कभी न टूटे, ऐसी निष्ठा ऐसा विश्वास हमारा इष्ट के प्रति रहे। इसके स्मरण करने की भावना से अक्षत चढ़ाए जाते हैं। ऐसा नहीं कि कोई काम बन गया तो हमारे पुरुषार्थ प्रयासों से बन गया और कोई काम बिगड़ गया तो गायत्री माता को दोष देने लगे। अक्षत नित्यप्रति भगवान को चढ़ाने का तात्पर्य है कि हमारी निष्ठा अक्षुण्ण बनी रहे, नित्यप्रति बढ़ती ही रहे।

भगवान को हमेशा ही मीठी वस्तुओं का भोग लगाया जाता है। परमात्मा को मिठास पसंद है। नमकीन, तीखी अथवा कड़वी चीजें भगवान को पसंद नहीं। इसका तात्पर्य यह है कि हमें हमेशा

अपनी वाणी पर संयम रखना चाहिए। मृदुभाषी होना चाहिए। इसका स्मरण बना रहे इसलिए हम भगवान को मीठा चढ़ाते हैं। आजकल लोग कर्मकांड तो कर लेते हैं किंतु उसके शिक्षण को, उसकी प्रेरणाओं को अपने जीवन में नहीं उतारते। नित्यप्रति भगवान को पुष्प चढ़ाने वाला भी अपने पुराने संस्कारों का गला काटकर भगवान के काम में समर्पण करने को तैयार नहीं होता।

यह पूज्यवर का एक और इंजैक्शन था जो हमें जीवंत तो कर गया लेकिन समर्पण की हिम्मत न दिला सका। पूज्यवर के इन आध्यात्मिक उपचारों से हमारे मन में इन प्रेरणाओं का बीजारोपण तो हो गया था, जो धीरे-धीरे अंकुरित होकर वृद्धि करने लगा था, किंतु विशेष तीव्रता वाले एक इंजैक्शन की अभी और आवश्यकता थी।

हम वही घटना बताने जा रहे हैं। उस घटना की स्मृति मात्र से आज भी हमारा सारा अस्तित्व हिल जाता है। पूज्य गुरुदेव अखण्ड ज्योति कार्यालय वाले मकान में रहते थे। हम पूज्य गुरुदेव से मिलने मथुरा आए। मकान पर पहुँचे तो मालूम हुआ, गुरुदेव वहाँ नहीं हैं। वंदनीया माताजी को हमने प्रणाम किया। उन्होंने कुशल क्षेम पूछी, बड़े स्नेह और दुलार से भोजन कराया। भोजन के बाद जब हम अपने बर्तन साफ करने जाने लगे तो माताजी ने हमें डाँटा और बोली कि बेटा! यह क्या करता है। बर्तन माँ साफ करती है या बेटा साफ करता है ? तू तो हमारी संस्कृति को ही उलट देना चाहता है। उसी क्षण हमें लगा कि जिस माँ को हमने बचपन में ही खो दिया, वह हमारे सामने खड़ी है। वंदनीया माताजी बोलीं—बेटा! तू मुझे भूल गया है, मैं ही तेरी माँ हूँ। बचपन से माँ के वात्सल्य, ममता और दुलार के प्यासे थे। वंदनीया माताजी के शब्दों ने यह चमत्कार कर दिया कि हमने मिशन को समर्पण का निश्चय कर लिया। जब गुरुदेव आए तो हमने उनसे समर्पण की बात कही और यह भी बताया कि वंदनीया माताजी के प्यार ने हमें समर्पण के लिए प्रेरित किया है।

तब से लेकर आज तक विषम से विषम परिस्थितियों में भी अपनी निष्ठा और श्रद्धा में कोई कमी नहीं आने दी। पूज्यवर ने जो भी दायित्व सौंपे उन्हें ईमानदारी के साथ निभाते चले गए। जब गुरुदेव मथुरा छोड़कर जून १९७१ में हरिद्वार जाने को थे, तब हमसे कहने लगे कि बेटा! ज्ञानयज्ञ को दो भागों में बाँट दिया है, सत्संग और स्वाध्याय। बोल तू कौन सा काम सँभालेगा? हमने कहा—गुरुदेव! हम तो स्वाध्याय के माध्यम से आपके विचारों से प्रभावित होकर ही मिशन से जुड़े हैं, अतः हम तो स्वाध्याय की जिम्मेदारी सँभालेंगे।

पूज्यवर बोले—कठिन और नीरस काम ले रहा है। हमने कहा—गुरुदेव! आपके आशीर्वाद से जीवन में कठिन काम ही सँभाले हैं और चलाए भी हैं। फिर बोले—देख ले, मैं तो हरिद्वार जा रहा हूँ। अकेला सँभाल लेगा? हमने कहा—आप निश्चिंत होकर जाइए, हमारा गुरु हमारे साथ है। विदाई समारोह धूमधाम से संपन्न किया था। मिशन का सारा बैंक बैलेंस समाप्त हो गया था। मात्र पाँच हजार रुपया बचा था। गुरुदेव बोले—पाँच हजार की धनराशि से कैसे काम चला लेगा? हमने कहा—जब हमारा गुरु हमारे साथ है तो हमें क्या चिंता है? पूज्यवर ने हमारी श्रद्धा निष्ठा को देखकर आशीर्वाद दिया—बेटा! ब्राह्मण का जीवन जीना, तुझे साधनों की कोई कमी नहीं आने देंगे। तब से अब तक कभी किसी के सम्मुख हाथ नहीं फैलाया, किसी से मिशन के लिए पैसा नहीं माँगा। मिशन के भाइयों से बिना ब्याज का उधार तो ले किया लेकिन माँगा नहीं। पूज्य गुरुदेव द्वारा बताई ब्राह्मण परंपरा का पालन किया और आप सब भाई देख रहे हैं कि गायत्री तपोभूमि में तब से लेकर अब तक कितना विकास हुआ है।

अपने सब आत्मीय भाई-बहिनों से हमारी एक ही प्रार्थना है कि पूज्य गुरुदेव ने ज्ञानयज्ञ की जो मशाल जलाई थी, उसे अब

दावानल बनाने के लिए अपने समय, धन, प्रभाव और योग्यता को लगा दें। पूज्य गुरुदेव के क्रांतिकारी विचारों को छोटी-छोटी पॉकेट बुक्सों के माध्यम से हर व्यक्ति तक पहुँचा दें। पूज्य गुरुदेव का आश्वासन है कि यदि आपने यह सब किया तो युग परिवर्तन में देर नहीं लगेगी। इक्कीसवीं सदी सन्निकट है। इक्कीसवीं सदी-उज्ज्वल भविष्य का जो नारा हम और आप पिछले पचास वर्षों से लगाते आ रहे हैं, उसके क्रियान्वयन के लिए अब हमें बस एक ही उपाय करना है। यूँ तो सारा मिशन सौ सूत्रीय युग निर्माण योजना के अंतर्गत आता है लेकिन सारी योजनाएँ अब एक सूत्र में सिमट गई हैं, और वह है 'ज्ञानयज्ञ'। सैकड़ों समस्याओं, दुःखों, कष्टों से ग्रसित तथा सद्ज्ञान, सद्विचारों की भूखी यह दुनिया युग निर्माण परिवार के कार्यकर्त्ताओं से यह आशा लगा रही है कि किसी युगऋषि के अमृत विचारों की वर्षा हो और निर्जीवों, प्राणहीनों में चेतना आए। सोए हुए जगें, जगे हुए चलें, चलने वाले दौड़ें और दौड़ने वाले उड़ें। पूज्य गुरुदेव ने हमको-आपको गुरुदीक्षा में अपना प्राण दिया है। हम पूज्य गुरुदेव के अंतःकरण की पीड़ा को समझें। एक स्थान पर पूज्यवर ने स्वयं लिखा है—

"आत्मीय परिजनो! जिस प्रकार ईश्वर की महान कृतियों को देखकर ही उसकी गरिमा का अनुमान लगाया जाता है, उसी प्रकार हमारा कर्त्तव्य पोला था या ठोस, यह अनुमान उन लोगों को परख करके लगाया जाएगा, जो हमारे श्रद्धालु और अनुयायी कहे जाते हैं। यदि वाचालता भर के प्रशंसक और दंडवत प्रणाम भर के श्रद्धालु रहे, तो माना जाएगा कि सब कुछ पोला रहा। असलियत कर्म में सन्निहित है। वास्तविकता की परख क्रिया से होती है।"

"यदि अपने गायत्री परिवार की क्रिया-पद्धति का स्तर दूसरे अन्य नर-पशुओं जैसा ही बना रहा, तो हमें अपने श्रम और विश्वास की निरर्थकता पर कष्ट होगा और लोगों की दृष्टि में उपहासास्पद बनना पड़ेगा।"

हम सब भाई-बहिनों को पूज्य गुरुदेव को यह आश्वासन देना होगा कि हम शेर के बच्चे हैं, गीदड़ की शक्ल में दिखाई नहीं देंगे। गुरु-दक्षिणा में हमने जो अंशदान और समयदान देने का संकल्प लिया था, उसका सदुपयोग ज्ञानयज्ञ में करेंगे। अपने अंशदान द्वारा साहित्य मँगा कर, समयदान द्वारा झोला पुस्तकालय चलाकर पूज्य गुरुदेव को घर-घर पहुँचाएँगे। यही पूज्य गुरुदेव के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि हो सकती है। पूज्य गुरुदेव रोली, चावल, फूल, पान, सुपारी चढ़ाने से प्रसन्न होने वाले नहीं हैं। पूज्य गुरुदेव अर्थात सद्विचार। सद्विचारों की सेवा ही पूज्य गुरुदेव की सेवा है। यज्ञों में प्रसाद के रूप में पॉकेट बुक्स का वितरण अवश्य कराया जाए। जिस घर में यज्ञ अथवा संस्कार हो उसमें ज्ञान मंदिर की स्थापना अवश्य कराई जाए। प्रत्येक विद्यालय में यदि एक शिक्षक भी पूरे मनोयोग से कार्य करे तो छात्रों के माध्यम से सैकड़ों-हजारों घरों में साहित्य आसानी से पहुँचाया जा सकता है। हम आप सभी पूज्य गुरुदेव के निष्ठावान शिष्य बनें।

□

भगवान भावना की उत्कृष्टता को ही प्यार करते हैं और सर्वोत्तम सद्भावना का एकमात्र प्रयत्न जनकल्याण के कार्यों में बढ़-चढ़कर योगदान करना ही है। अब बातों का युग बहुत पीछे रह गया है। कार्यों से ही किसी व्यक्ति के झूँठे या सच्चे होने की परख की जाएगी।

ज्ञानयज्ञ प्रचारक बनें

ज्ञान का महत्त्व सर्वविदित है। जीवन जीने की कला का ज्ञान जन-जन तक पहुँचे, इस हेतु हर लोकसेवी, समाजसेवी को चाहिए कि वह ज्ञानयज्ञ प्रचारक बने, युग साहित्य के माध्यम से घर-घर ज्ञान की गंगा को पहुँचाने का पुरुषार्थ करें। धर्म और अध्यात्म के क्षेत्र में युगानुकूल शोध कार्य करने वाले ऋषियों का ज्ञान हर व्यक्ति तक पहुँचाया जाए, इसके लिए युग निर्माण योजना, मथुरा द्वारा योजना बनाई गई है। इस कार्य में रुचि रखने वाले प्रत्येक ज्ञानयज्ञ प्रचारक को युगऋषि का संदेशवाहक बनना चाहिए। इसके लिए 100 रुपए अमानत राशि युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, मथुरा के नाम भेज कर अपने विद्या विस्तार केंद्र का पंजीयन करा लेना चाहिए। प्रत्येक ज्ञानयज्ञ प्रचारक को निरंतर छपने वाली पॉकेट बुक्स में से जो पुस्तकें छप जाती हैं उनमें से प्रत्येक की 100-100 प्रतियाँ क्रमशः मँगा कर बिक्री द्वारा अथवा अनुदान राशि से निःशुल्क वितरण द्वारा समाज में पहुँचानी चाहिए। यह एक महान पुण्य कार्य है। इसमें सभी को अपना समय-साधन लगाना चाहिए।

व्यवस्थापक

युग निर्माण योजना,
मथुरा-३

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)

: युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य- संक्षिप्त परिचय :

ज्यादा जानकारी यहाँ से प्राप्त करें :
http://hindi.awgp.org/about_us
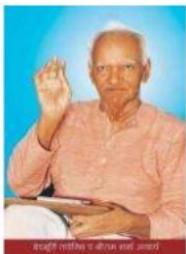
- **विचारक्रान्ति अभियान के प्रणेता :** विचारों को परिस्कृत और ऊँचा उथाने मे समर्थ 3000 से भी अधिक पुस्तकों के लेखन के माध्यम से विश्वव्यापी विचार क्रान्ति अभियान की शरुआत की ।
- **वेद, पुराण, उपनिषद के प्रसिद्ध भाष्यकार :** जिन्हों ने चारों वेद, 108 उपनिषद, षड दर्शन, 20 स्मृतियाँ एवं 18 पुराणों का युगानुकूल भाष्य किया, साथ ही 19 वाँ प्रज्ञा पुराण की रचना भी की ।
- **3000 से अधिक पुस्तकों के लेखक :** मनुष्य को देवता समान, घर-परिवार को स्वर्ग, समाज को सभ्य और समग्र विश्वराष्ट्र को श्रेष्ठ बनाने मे समर्थ हजारों पुस्तकें लिखकर समयानुकूल समर्थ मार्गदर्शन प्रदान किया ।
- **युग-निर्माण योजना के सूत्रधार :** जिन्होंने शतसूत्री युग निर्माण योजना बनाकर नये युग की आधार शिला रखी ।
- **वैज्ञानिक-अध्यात्मवाद के प्रणेता** : जिन्हों ने धर्म और विज्ञान के समन्वय की प्रथम प्रयोगशाला 'ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान' स्थापित कर सिद्ध किया कि "धर्म और विज्ञान विरोधी नहीं, पुरक है "।
- **'२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' के उद्घोषक** : जिन्हों ने '२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' का नारा दिया तथा युग विभीषिकाओं से भयग्रस्त मनुष्यता को नये युग के आगमन का संदेश दिया ।
- **स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सैनानी** : जिन्हों ने महात्मा गाँधी, मदन मोहन मालवीय, गुरुवर रविन्द्रनाथ टैगोर के साथ राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया एवं स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी "श्रीराम मत्त" के रुप में प्रख्यात हुए ।
- **गायत्री के सिद्ध साधक** : जिन्हों ने गायत्री और यज्ञ को रुढियों और पाखण्ड से मुक्त कर जन-जन की उपासना का आधार तथा सद्बुद्धि एवं सतकर्म जागरण का माध्यम बनाया ।
- **तपस्वी** : जिन्होंने गायत्री की कठोरतम साधना कर २४-२४ लाख के २४ महापुरश्चरण २४ वर्षो में सम्पन्न किया । प्रकृति प्रकोप को शांत कर अनिष्टों को टाला, सृजन सम्भावनाओं को साकार किया ।
- **अखिल विश्व गायत्री परिवार के जनक** : जिन्हों ने अपने जीवनकाल में ही अपने साथ करोडों लोगों को आत्मियता के सूत्र में बाँधकर विश्व व्यापी 'युग निर्माण परिवार' - 'गायत्री परिवार' का गठन किया ।
- **समाज सुधारक** : जिन्हों ने नारी जागरण, व्यसन मुक्ति, आदर्श विवाह, जाति-पाँति प्रथा तथा परंपरागत रुढियों की समाप्ति हेतु अद्भूत प्रयास किए एवं एक आदर्श स्वरुप समाज में प्रस्तुत किया ।
- **ऋषि परम्परा के उद्धारक** : जिन्हों ने इस युग में महान ऋषियों की महान परंपराओं की पुनर्स्थापना की । लुप्तप्राय संस्कार परंपरा को पुनर्जीवित कर जन-जन को अवगत कराया ।
- **अवतारी चेतना** : जिन्होंने "धरती पर स्वर्ग के अवतरण और मनुष्य में देवत्व के जागरण" की अवतारी घोषणा को अपना जीवन लक्ष्य बनाया और चेतना का ऐसा प्रवाह चलाया कि करोंडों व्यक्ति उस ओर चल पड़े ।

गायत्री परिवार जीवन जीने कि कला के, संस्कृति के आदर्श सिद्धांतों के आधार पर परिवार,समाज,राष्ट्र युग निर्माण करने वाले व्यक्तियों का संघ है। **वसुधैवकुटुम्बकम्** की मान्यता के आदर्श का अनुकरण करते हुये हमारी प्राचीन ऋषि परम्परा का विस्तार करने वाला समूह है गायत्री परिवार। एक संत, सुधारक, लेखक, दार्शनिक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक और दूरदर्शी युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा स्थापित यह मिशन युग के परिवर्तन के लिए एक जन आंदोलन के रूप में उभरा है।